Con. 3. IX.14.49
320

अंक 9
संख्या 14

शनिवार,
20 अगस्त
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा—जारी
[अनुच्छेद 277, 279-क तथा 280 पर विचार] 767-827

भारतीय संविधान सभा

शनिवार, 20 अगस्त, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रातः 9 बजे उपाध्यक्ष महोदय (श्री वी.टी. कृष्णमाचारी) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा—*जारी*

अनुच्छेद 277—*(जारी)*

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा: जनरल): मैं अनुच्छेद 277 का विरोध करने खड़ा हुआ हूं, जो संविधान में व्यर्थ है। श्रीमान, इस संविधान में जो आपात शक्तियां रखी गई हैं, वे लगभग वे ही हैं जो भारत-शासन-अधिनियम, 1935 की धारा 93 में हैं, कुछ आवश्यक परिवर्तन कर दिये गये हैं। इस खंड के विश्लेषण से पता लगता है कि इसके तीन भाग किये गये हैं, प्रथम युद्ध आपातों सम्बन्धी उपबन्ध, द्वितीय घरेलू हिंसा सम्बन्धी उपबन्ध, तृतीय ऐसी हिंसा या हिंसा-कार्यों के लिये उपबन्ध जो कि राष्ट्रपति सद्य संभावित और भयानक समझे। किसी संविधान के अधीन कार्य करने वाली सरकार को सदा अधिकार होता है कि वह बाह्य आक्रमण अथवा युद्ध आपातों में स्थिति को संभालने के लिये सब आवश्यक शक्तियां ग्रहण कर सकती है। उस हद तक साधारण नागरिकों के अधिकारों और शक्तियों पर संविधान के अधीन कोई निर्बन्धन लगाया जा सकता है। मुझे विश्वास नहीं है कि प्रश्न के इस पहलू पर इस सदन को कोई माननीय सदस्य आपत्ति करता है। यदि कोई दल या प्रान्तीय सरकार अपने ही मार्ग पर चलकर ऐसा कार्य कर सकती है, जो संघ के सर्वोपरि हितों या उसकी सुरक्षितता के विरुद्ध हो या विपरीत हो, तो उसे लोकतंत्र कहना अद्‌भुत होगा। इन परिस्थितियों में युद्धकाल या युद्ध आपात में केन्द्र के लिये जो शक्ति रक्षित की गई है वह ठीक ही है।

श्रीमान, अब हम घरेलू हिंसा के प्रश्न पर और ऐसी हिंसा के कार्यों पर आते हैं, जिन्हें राष्ट्रपति सद्यसंभावित और भयानक समझे। ये भिन्न-भिन्न प्रश्न हैं और उन पर भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से विचार करना होगा। जैसा कि मैं कई अवसरों पर कह चुका हूं, मैं फिर कहता हूं कि हम लोकतंत्र पद्धति में दलीय सरकार की कल्पना कर रहे हैं। दलीय सरकार का अवश्य यह आशय है कि विभिन्न दल होंगे। ऐसे संघ में जहां एक केन्द्र होगा और एकक होंगे, इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि विभिन्न एककों में या केन्द्र में विभिन्न राजनैतिक दल प्रशासन के कार्य-साधक हो सकते हैं। इन परिस्थितियों में इन शक्तियों के दुरुपयोग की संभावना है। व्यक्तिगत रूप से मुझे इस दुरुपयोग का अनुभव है। मद्रास के न्याय दल के गत अनुभव को स्मरण करता हूं, तो मैं वहां देख चुका हूं कि

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री विश्वनाथ दास]

जिला मंडलों और नगरपालिकाओं को कैसे निर्दयता से दबा दिया गया था, क्योंकि शायद सरकार के पास इन नगरपालिकाओं को दमन करने की शक्ति शेष थी। मद्रास में एक दल विशेष ने जिला मंडलों और नगरपालिकाओं के विषय में जो कुछ किया था, वही केन्द्र भी दोहरा सकता है। अतः मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि ऐसी किसी स्थिति को निबटाने की कोई शक्ति केन्द्र में या राज्यपालों में, जो कि केन्द्र के अभिकर्ता ही हैं, नहीं छोड़नी चाहिये।

आप युद्ध आपात के लिये जो भी शक्ति अपने आप में रक्षित रखें, वह बिल्कुल ठीक है। हम उसका विरोध नहीं करते। मैं इस तथ्य को स्वीकार करता हूं कि अनुच्छेद 275 से 277 तक तथा शेष अनुच्छेदों में जो उपबन्ध हैं, वे इतने कठोर नहीं हैं जितने भारत-शासन-अधिनियम की छोटी-सी धारा 93 के उपबन्ध हैं। मैं यह तो समझता हूं कि आपने राज्यपाल को वे सब कार्यपालिका सम्बन्धी तथा विधायिनी शक्तियां नहीं दी हैं, जो कि धारा 93 में हैं। मैं यह भी स्वीकार करता हूं कि आप यथेच्छा उच्च न्यायालय की शक्तियों को समाप्त नहीं करते। यह सब मैं मानता हूं। आप 277 जैसे अनुच्छेद को क्यों रखते हैं जो धारा 93 में भी नहीं है? भूत के अनुभव से मैं कह सकता हूं कि युद्धकाल में (द्वितीय विश्व युद्ध में) प्रान्त केन्द्र से अपना वित्तीय अंश प्राप्त करते रहे थे, वे प्रान्त भी जहां कि धारा 93 के अधीन शासन चल रहा था। मै यह भी अनुभव करता हूं कि केन्द्र में कृत्य करने वाली उत्तरदायी सरकार उन अनुदानों को समाप्त नहीं कर सकती, जो कि राष्ट्रनिर्माण के कार्यों के लिये प्रान्तों को दिये जाते हैं, जब तक कि वह अपनी चिता की न बनाना चाहे। यह भी सम्भव है कि केन्द्र में कोई अलोकतंत्रीय दल सत्तारूढ़ हो जाये। इन परिस्थितियों में मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि ऐसे मामलों में आवश्यक कार्यवाही ही करने की अधिक शक्ति संविधान के अधीन केन्द्र में क्यों रक्षित की जाये। यह तो प्रान्तों को आधे मन से स्वायत्तता देना है। अतः मैं इस सदन के माननीय सदस्यों तथा मस्विदा समिति से अनुरोध करता हूं कि इस अनुच्छेद पर पुनर्विचार किया जाये।

फिर मुझे कहना है कि केन्द्रीय समिति तथा प्रान्तीय समिति इन दोनों में से किसी के भी प्रतिवेदन में ऐसी शक्तियों की सिफारिश नहीं की गई है, जो अनुच्छेद 277 के अधीन प्रान्तों को दी जा रही है। मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि मस्विदा समिति ने यह बात क्यों रखी है, जबकि उसे इस सदन ने भी कोई प्राधिकार नहीं किया था और प्रान्तीय या केन्द्रीय संविधान समितियों ने भी ऐसी कोई बात अपने प्रतिवेदनों में नहीं रखी थी। अनुच्छेद 275 के अधीन आपात की उद्घोषणा होने पर प्रान्तों की स्वायत्तता को समाप्त किया जा रहा है और जो शक्तियां प्रान्तीय कार्यपालिका में निहित हैं, वे लगभग केन्द्र को मिल जाती हैं क्योंकि प्रान्त पर राष्ट्रपति के निदेशों के अनुसार शासन होगा। ऐसी स्थिति में आप अनुदानों को भी क्यों बंद करते हैं, निलंबित करते हैं या कम करते हैं, उन अनुदानों को, जो राष्ट्रपति या विधान-मंडल निश्चित नहीं करता, वरन् आप द्वारा निर्मित एक अराजनैतिक निकाय निश्चित करता है?

एक क्षण के लिये यह मान लिया जाये कि वे अनुदान निलम्बित कर दिये जाते हैं, तो उनसे सम्बद्ध कार्य, राष्ट्र-निर्माण अथवा प्रशासनीय कार्य उस हद तक निलम्बित हो जाते हैं। आप उस धन का क्या करेंगे? सारा धन-वितरण एक सुनिश्चित नियमित आधार पर हुआ है, प्रत्येक प्रान्त को उसका भाग मिलता है, उधर वह धन पड़ा रहता है और उचित प्रयोजन के लिये प्रयुक्त नहीं होता। आप प्रान्तों के बीच यह विभेद क्यों उत्पन्न करते हैं? यदि घरेलू हिंसा के कारण या ऐसे हिंसा-कार्यों के कारण जो राष्ट्रपति प्रान्त या प्रान्तों में सद्यसंभावित और भयानक समझे, तो आप प्रान्त के लोगों को क्यों दंड देते हैं, जो सरकार से भिन्न हैं, सरकार इन विधि-विरुद्ध तथा हिंसात्मक कार्यवाहियों का कुप्रबन्ध करने या उनको प्रोत्साहित करने की उत्तरदायी हो सकती थी? यह पर्याप्त है कि प्रान्तीय कार्यपालिका को निलम्बित कर दिया जाये या प्रान्तीय विधान-मंडल को निलम्बित कर दिया जाये। पर जनता को ऐसे कार्य का दंड क्यों दिया जाये जिसके लिये वह जरा भी उत्तरदायी नहीं है? इन परिस्थितियों में मैं समझता हूं कि जनता के समक्ष स्वीकृति के लिये जो अनुच्छेद प्रस्तावित है, उसका न कोई आधार है और न उनमें न्याय ही है। मेरे पास इसका विरोध करने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल) उपाध्यक्ष महोदय, मैं अपनी पूर्ण शक्ति से इस अनुच्छेद का समर्थन करने खड़ा हुआ हूं। मेरे मित्र श्री विश्वनाथ दास ने लोकतंत्र का प्रश्न उठा दिया है। इस सम्भावना पर किस इस देश में महान आपात की स्थिति में लोकतंत्र समाप्त हो जायेगा, वे आंसू बहा रहे हैं। मेरा यह सुनिश्चित मत है कि यहां लोकतंत्र का प्रश्न अंतर्ग्रस्त नहीं है, वरन् देश की सुरक्षितता का प्रश्न है और मैं अनुभव करता हूं कि यह अनुच्छेद, अनुच्छेद 275 का आवश्यक परिणाम है। केन्द्र में कहीं न कहीं शक्ति का राजनैतिक एकत्रण होना चाहिये, जिससे कि वह ऐसी परिस्थिति को संभाल सके जबकि देश में गम्भीर आपात हो। यह समस्त विचार ही असमर्थनीय है कि केन्द्र की कोई सरकार प्रान्तों को भूखा मारेगी तथा चिकित्सा सम्बन्धी, शैक्षणिक या अन्य राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी विभाग समाप्त हो जायेंगे। श्री विश्वनाथ दास का यह ख्याल है कि केन्द्र में अलोकतंत्रीय दल आ जाने के पश्चात भी इस देश में प्रान्तीय स्वायत्तता या लोकतंत्र जीवित रह सकेगा। यदि केन्द्र में अलोकतंत्रीय सरकार बन जायेगी तो प्रान्तीय स्वायत्तता शेष नहीं रहेगी। मेरा यह मत है कि हम प्रान्तों को पहले ही अत्यधिक शक्ति दे चुके हैं और जिस समय आपात हो, तब समूचा संविधान एकात्मक बन जाना चाहिये। जब इस देश में एकात्मक राज्य हो तभी प्रगति हो सकती है। मुख्य प्रश्न लोकतंत्र नहीं है, वरन् देश की सुरक्षा है और भारत के लोगों का कल्याण है। हम देश में प्रगति चाहते हैं। अत: मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम: जनरल): श्रीमान, मैं इसे बहुत कठोर उपबन्ध समझता हूं। इसका प्रभाव प्रान्त को पूर्णत: अव्यवस्थित करना होगा। वास्तव में मेरा ख्याल है कि प्रथम शिकार आसाम ही होगा। यदि आपको संविधान निलम्बित करने की शक्ति होगी, तो प्रान्त कैसे कृत्य करेंगे? इस उपबन्ध के मिस कदाचित आप सब वित्त केन्द्र के लिये ले लेंगे और प्रान्त के पास कुछ नहीं बचेगा। इस उपबन्ध के अधीन क्या होगा? किसी दिन बर्मा के साम्यवादी पूर्वी सीमान्त में घुस सकते

[श्री कुलधर चालिहा]

हैं। फिर उसी मिस आपात की घोषणा हो जायेगी और आप सब शक्तियों को ले लेंगे। यदि समस्त राज्य की केन्द्र के विरुद्ध विद्रोह कर दे; हां, तब आपात की घोषणा हो सकती है; पर यदि आपात की परिभाषा न की जाये और यह न बताया जाये कि ये उपबन्ध किन परिस्थितियों में लागू हो सकते हैं, तो इनसे अप्रत्याशित परिणाम हो सकते हैं। मेरा निवेदन है कि यह उपबन्ध ऐसे प्रकार रखा गया है कि सारे परिणाम प्रकट नहीं होते; यदि इसका प्रयोग किया गया तो बहुत कठिनाई हो जायेगी। हां, श्री ब्रजेश्वर प्रसाद तो बहुत सीधे और संतुलित व्यक्ति हैं और वे सदा देश की स्थिरता का ही ख्याल करते हैं और वे सोचते हैं कि यदि प्रान्तों में शक्ति रहने दी गई, तो संविधान संकट में पड़ सकता है और वे आगे यह भी सोचते हैं कि सब सद्गुण केन्द्र में ही हैं और प्रान्त सब सद्गुणों से वंचित हैं। वे सब शक्ति राष्ट्रपति में एकत्रित करना चाहते हैं। यदि हम ऐसे चलेंगे तो प्रान्तों के पास कुछ भी नहीं बचेगा। आप तो पुरानी द्वैध शासन पद्धति को पुनः लागू कर रहे हैं और सब शक्ति केन्द्र में ही होगी और प्रान्त गौण होंगे। यदि आप इस उपबन्ध को रखना चाहते हैं, तो आपको यह परिभाषित करना होगा कि आपात क्या है और वे किन परिस्थितियों में लागू किये जा सकते हैं; अन्यथा यह 'आपात' शब्द इतना अस्पष्ट है कि यदि छोटी सी नागा जाति भी आसाम पर आक्रमण कर देगी, तो आप आपात घोषित कर देंगे या डिब्रूगढ़ में साम्यवादी उपद्रव हो जायेगा तो आप आपात घोषित कर सकते हैं। अतः मैं डॉ. अम्बेडकर से प्रार्थना करता हूं कि यह वे परिभाषित कर दें कि आपात शब्द का क्या अर्थ है और किन परिस्थितियों में यह निलम्बन या करों का केन्द्र द्वारा ग्रहण हो सकता है। हां, प्रान्त सब केन्द्र के हाथ में कठपुतलियां ही होंगे और मुझे आशा है कि संविधान के मस्विदा-लेखक महोदय इस मामले पर विचार करेंगे और यह परिभाषित करने का प्रयत्न करेंगे कि आपात क्या है और वह कि परिस्थितियों में लागू किया जा सकता है।

***उपाध्यक्षः** (श्री वी.टी. कृष्णमाचारी): मेरे विचार में श्रीमती दुर्गाबाई ने समाप्ति का प्रस्ताव किया है। मुझे विश्वास है कि सदन उससे सहमत होगा।

***माननीय सदस्यगणः** नहीं, नहीं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रासः जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, अनुच्छेद 277 से राष्ट्रपति को यह शक्ति होगी कि वह एककों और केन्द्र के बीच राजस्व के वितरण सम्बन्धी वर्तमान व्यवस्था में यथा-आवश्यक परिवर्तन कर सकता है। यह शक्ति राष्ट्रपति को केवल आपात की कालावधि के लिये ही दी गई है और मेरे मतानुसार यह अनुच्छेद 275 का आवश्यक परिणाम है, जिस पर यह सदन पहले ही सहमत हो चुका है। यह सदन पहले ही स्वीकार कर चुका है कि आपात की अवधि में राष्ट्रपति को सर्वोपरि शक्ति होनी चाहिये कि वह देश के हित और शान्ति की रक्षा कर सके। इन विशेष शक्तियों से क्या लाभ है, क्या मैं पूछ सकती हूं, यदि राष्ट्रपति को इतना भी प्राधिकार न हो कि वह एककों से यह अनुरोध कर सके कि एकक और केन्द्र के बीच वित्तों के वितरण को ठीक ठाक कर दिया जाये?

जब युद्ध हो या देश के संविधान को ही खतरा हो, तब गम्भीर आपात उत्पन्न हो जाता है और यह आपात की स्थिति को सफलतापूर्वक पार करने के लिये अधिकतम त्याग आवश्यक है। एक माननीय सदस्य ने इस अनुच्छेद 277 का कड़ा विरोध किया है। उन्होंने स्वीकार किया कि राष्ट्रपति एककों से कह सकता है कि वे अपनी विकास-योजनाओं पर व्यय को बंद कर दें, पर उसी सांस में उन्होंने कहा कि केन्द्र को यह शक्ति नहीं होनी चाहिये कि वह वित्तों के वितरण में परिवर्तन कर सके अथवा एककों तथा केन्द्र के बीच विद्यमान वित्तों के विषय में आवश्यक सुधार कर सके। यह भूलना नहीं चाहिये कि सर्वप्रथम तो राष्ट्रपति का अर्थ है, अपने मंत्रि-मंडल की मंत्रणा पर चलता हुआ राष्ट्रपति, दूसरी बात हमने यह शक्ति राष्ट्रपति को केवल आपात की अवधि के लिये दी है। यह शक्ति किसी अवस्था में वित्तीय वर्ष से अधिक नहीं होगी और अन्ततः इसमें किसी समय संसद हस्तक्षेप कर सकती है, यदि कोई गड़गड़ हो जाये।

अतः मैं नहीं समझती कि कुछ माननीय सदस्य इन शक्तियों के देने पर क्यों आपत्ति करते हैं, जबकि डॉ. अम्बेडकर ने तथा अन्य सदस्यों ने भी जो कि इसका समर्थन करते हैं, परिस्थितियों को स्पष्ट कर दिया है। इन परिस्थितियों में यह समझना असाधारण रूप से अन्याय है कि इस अनुच्छेद में केन्द्र की वित्तीय निरंकुशता का उपबन्ध है। निस्संदेह ऐसा नहीं समझना चाहिये, क्योंकि हमने ये शक्तियां एक विशेष काल के लिये दी हैं, जिसे हम आपात काल कहते हैं, और हमने हर हालत में इसकी कालावधि को एक वित्तीय वर्ष तक सीमित रखा है, और हमने संसद को भी शक्ति दे दी है कि कुछ गड़बड़ होने पर वह कभी भी हस्तक्षेप कर सकती है। अतः, श्रीमान, मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा संशोधित अनुच्छेद 277 का समर्थन करती हूं।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्त्ति राव** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय, मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन द्वारा संशोधित रूप में अनुच्छेद 277 का समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं। पंडित कुंजरू का आदर करते हुए मैं उनके संशोधन का विरोध करता हूं। वास्तव में मेरा विचार है कि श्री चलिहा ने अनुच्छेद 275 को अच्छी तरह पढ़ा नहीं है। आपात तभी होता है, जबकि युद्ध हो, अथवा आंतरिक गड़बड़ या बाह्य आक्रमण हो। ऐसी परिस्थितियों में केन्द्र को असाधारण शक्तियां देनी होंगी। मुझे विश्वास है कि संदेह इस कारण पैदा हुआ है कि लोग समझते हैं कि केन्द्र प्रान्तों से भिन्न है। वास्तव में आपात अवधि केवल दो मास रहती है, और वह तभी जारी रहती है जबकि संसद के अधिवेशन आरम्भ होने के एक मास के भीतर की संसद उसका अनुसमर्थन कर दे; यदि अनुसमर्थन नहीं होता तो आपात स्थिति समाप्त हो जाती है। और जिस कालावधि के लिये अनुच्छेद 277 के अधीन वित्तीय शक्तियां दी जाती हैं, वह भी एक वर्ष से अधिक नहीं हो सकती, क्योंकि आयव्यक तो प्रति वर्ष बनना ही चाहिये। आपात की कालावधि में समस्त देश की सुरक्षितता और हिफाजत केन्द्र का ही उत्तरदायित्व होना चाहिये, और केन्द्र को असाधारण शक्तियां होनी चाहियें। अन्यथा गम्भीर आपात के समय यदि प्रान्तों और केन्द्र के बीच वित्तीय अंशों को ठीक करने के विषय में झगड़े होने दिये गये, तो भारत की सुरक्षा जोखम में पड़ जाएगी; और यदि भारत बच जाता है, तो प्रत्येक प्रान्त बच जाता है और प्रत्येक नागरिक बच जाता है—अन्यथा नहीं। देश की सुरक्षा ही सर्वोपरि बात होनी चाहिये और अनुच्छेद 277 के अधीन जो शक्तियां दी गई हैं, वे नितान्त आवश्यक हैं और इसलिये मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): प्रश्न पर अब मत लिये जायें।

***उपाध्यक्ष:** मैंने श्री सरवटे को वचन दिया है कि मैं उन्हें बोलने दूंगा। मैं प्रश्न पर बाद में मत लूंगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): कई अन्य वक्ता भी हैं; आप उन्हें प्रत्येक को थोड़ा सा समय, यों कहिये, कम से कम दो मिनट ही केवल दे सकते हैं।

***श्री वी.एस. सर्वटे** (मध्य भारत): उपाध्यक्ष महोदय, मैं आपको धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे अपने विचार प्रकट करने का यह अवसर दिया है। किन्तु मैं लम्बा नहीं बोलूंगा। मेरे विचार में धारा 276, 277 और 227 को साथ पढ़ना चाहिये। जब कोई आपात होगा, तब केन्द्र की सरकार को दो विभागों के रूप में कार्य करना होगा, कार्यपालिका और विधायिका के रूप में। अनुच्छेद 227 द्वारा केन्द्र को शक्तियां दी गई हैं कि वह ऐसे विषयों पर विधि बना सकता है, जो राज्य-विधान-मंडल के क्षेत्र में आते हैं। अनुच्छेद 276 (ख) द्वारा द्वारा केन्द्र को शक्ति दी गई है कि वह ऐसे मामलों के विषय में कार्यपालिका कृत्यों को अपने हाथ में ले सकता है। अब जबकि केन्द्रीय सरकार कुछ कर्तव्यों को अपने हाथ में लेती है जो अन्यथा प्रान्तों या राज्यों द्वारा किये जाने हैं, तो यह स्वाभाविक और आवश्यक है ही के उसे अपेक्षित धन भी मिलना चाहिये। अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुच्छेद 277 तो वित्तीय क्षेत्र में उन शक्तियों का प्रभाव ही है, जो अनुच्छेद 227 और 276 में दी गई हैं, जिनके लिये सदन पहले ही सहमत हो चुका है। उदाहरण के लिये, यदि केन्द्र आरक्षी के कृत्य अपने हाथ में ले लेता है, जब राज्य में आपात हो, तो उसे अधिक धन की आवश्यकता होगी। अनुच्छेद 227 में इसका उपबन्ध किया गया है। यदि यह उपबन्ध नहीं किया जाये तो यह ऐसी बात होगी कि कार दे दी जाये और उसे चलाने के लिये पैट्रोल नहीं दिया जाये। अत: मैं कहता हूं कि ये तीनों अनुच्छेद एक दूसरे से बहुत सम्बद्ध है और आप वित्तीय उपबन्धों को शेष उपबन्धों से अलग नहीं कर सकते। इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा:** श्रीमान, अब प्रश्न पर मत लिये जायें।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रांत तथा बरार: जनरल): श्रीमान, श्री बी. दास कल से प्रयत्न कर रहे हैं कि आपकी दृष्टि उन पर पड़ जाये।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान, प्रश्न पर मत लेने की प्रार्थना अत्यन्त समयपूर्व है।

***उपाध्यक्ष:** मुझे इसका पता नहीं है, मैंने श्री बी. दास से बोलने के लिये कहा है।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान, संविधान के मस्विदे के भाग 11 में आपात उपबन्ध हैं। यदि आप पृष्ठ 129 से 131 को देखें, तो आपको पता लगेगा कि अनुच्छेद 275 और 276 में संघ समिति और संघ संविधान समिति की, जिनके सभापति पंडित जवाहरलाल नेहरू थे, मूल इच्छायें निहित हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मस्विदा समिति को कुछ प्रेरणा प्राप्त हुई और यह बात स्पष्ट नहीं की गई है कि उसे यह प्ररेणा कहां से प्राप्त हुई कि अनुच्छेद 227 के वित्तीय उपबन्धों को रखा जाये ओर बाद के अनुच्छेद 278 को रखा जाये–उन्होंने ये दो

नये अनुच्छेद रखे हैं। श्रीमान, यह कहा जाता है कि भारत विश्व-शांति का समर्थन करता है और राष्ट्रपिता के मार्ग का अनुसरण कर रहा है। किन्तु जो कोई अनुच्छेद 277 को पढ़ेगा वह स्वयं समझ लेगा, और यदि यह पारित हो जायेगा तो इससे सिद्ध हो जायेगा कि भारत राष्ट्रों के विरुद्ध आक्रमणात्मक युद्ध करने के लिये सब प्रान्तों को भूखा मारने की तैयारी कर रहा है। अनुच्छेद 277 में क्या है? इससे राष्ट्रपति को सब शक्ति मिल जायेगी, सब वित्तीय शक्तियां मिल जायेगी और वह प्रान्तों को भूखा भी मार सकेगा—यह एक नया फेन्केन्स्टीन है, जो संविधान द्वारा बनाया गया है, क्योंकि भारत का राष्ट्रपति लोकतंत्रात्मक राष्ट्रपति नहीं होगा, वह दक्षिणी अमरीका के राष्ट्रपतियों के समान होगा, जो सब आपात शक्तियों का प्रयोग करेगा। आसाम, उड़ीसा, बिहार और बंगाल के प्रान्तों की ओर से अनुच्छेद 249 से 259 पर नग्न आलोचना हुई है, वे प्रान्त भूखे मारे जा रहे हैं, यद्यपि उनका कोई अपराध नहीं है, और यदि अनुच्छेद 277 को सदन में पारित कर दिया जाता है, तो इन प्रान्तों पर विपत्ति आ जायेगी।

श्रीमान, यदि मैं मस्विदा समिति के लेखकों और पूर्ववर्ती सरकार—ब्रिटिश शासकों के दृष्टिकोणों की तुलना करूं, तो मैं देखता हूं कि उस सरकार ने गत महायुद्ध में प्रान्तों के साधनों को छीना नहीं था। यह सत्य है कि वे कर लगाते गये, वे अतिरिक्त आय-कर, निगम-कर, अतिरिक्त लाभ कर तथा कई अन्य कर लगाकर अपनी करारोपण क्षमता को बढ़ाते गये। उन्होंने निर्यात-कर आदि बढ़ा दिये। हां, यह भी प्रान्तों के लोगों पर ही कर लगाना हुआ; पर कभी भी केन्द्र ने प्रान्तों के साधनों को नहीं छीना। आज हमसे कहा जाता है कि प्रान्तीय राजस्वों को हड़पने की यह शक्ति राष्ट्रपति को दे दी जाये। हमें यह बताया जाता है कि निर्वाचित मंत्रिमंडल होगा ही और वह मंत्रिमंडल राष्ट्रपति को मंत्रणा देगा। विद्यमान सरकार में एक निर्वाचित वित्त-मंत्री है, जो इस सदन का सदस्य है। क्या कारण है कि वह अपने रुख की सफाई पेश नहीं करते कि उन्होंने या उनके मंत्रिमंडल ने मस्विदा समिति को यह मंत्रणा क्यों दी कि वह आपात के समय प्रान्तों के साधनों को कम करे या खर्च करे या हड़प करे? श्रीमान, यह भावी संसद की लोकतंत्रात्मक भावना को चुनौती है। क्या मस्विदा समिति के सदस्य यह समझते हैं कि आपात होने पर संसद राष्ट्रपति को या मंत्रिमंडल को ऐसी निरंकुश शक्ति देने के लिये तैयार नहीं होगी? दूसरे देशों में उसने ऐसा ही किया। भारत की संसद इससे भिन्न आचरण क्यों करेगी। मैं कह सकता हूं कि भावी संसद भी ऐसे ही अच्छे, बुरे या उदासीन होंगे, जैसे कि हम सब इस समय हैं।

मैं अपने माननीय मित्र पंडित हृदयनाथ कुंजरू का अनुगृहीत हूं कि उन्होंने प्रान्तों के वित्तीय साधनों को हड़प करने की राष्ट्रपति की शक्ति के महत्वपूर्ण विषय पर बहस आरम्भ की है। यह हो पूंजी-कर के समान है। यह तो दूसरों की सम्पत्ति का बलात हरण करना है। गत महायुद्ध में नास्सियों ने लोगों के घरों से लोहा और धातुयें ले ली थीं—अपने ही देश में नहीं वरन् पराजित देशों में भी। भारत सरकार, नात्सियों के समान आपात में राज्यों को प्रदत्त राजस्वों को क्यों छीनना चाहती है? मैं यह बिल्कुल नहीं समझ सकता। क्या केन्द्र प्रान्तों को यह दान

[श्री बी. दास]

दे रहा है कि वह आपात में राजस्व के उस भाग को छीन सकता है? मैं देखता हूं कि प्रान्तों को आय-कर तथा केन्द्रीय करों में से सारवान भाग मिलता है:

उड़ीसा	24 प्रतिशत
आसाम	22 प्रतिशत
बिहार	20 प्रतिशत
बंगाल	19 प्रतिशत
युक्त प्रान्त	18 प्रतिशत
बम्बई	19 प्रतिशत

और मद्रास को, जिसका राजस्व सबसे अधिक 55.94 करोड़ है, आय-कर में से 15 प्रतिशत मिलता है। निस्संदेह हमने कोई यह नया वितरण नहीं किया है। विद्यमान सरकार ने यह राशियां निश्चित नहीं की हैं, 1947 में केवल कुछ रूपभेद किये हैं जिससे पाकिस्तान बनने के पश्चात् बंगाल को, जो पहले आयकर का 20 प्रतिशत पाता था, अब 15 प्रतिशत से ही संतोष करना होगा।

श्रीमान, मेरे विचार में ऐसी आपातिक शक्ति आवश्यक नहीं है। ऐसा अपहार तो किसी लोकतंत्र में नहीं हो सकता, भारत की क्या बात। मैंने अपने माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी आयर की वक्तृता को बहुत ध्यान से सुना और मैंने अनुभव किया कि उनका तर्क विधिरूप था और उसमें कोई सार नहीं है, जिससे कि राष्ट्रपति मंत्रिमंडल को ऐसी शक्ति प्रदान करना उचित सिद्ध हो सके। प्रत्येक जानता है कि अब भारत सरकार प्रान्तों की ओर से सब विक्रय-कर को एकत्र करके वितरित करने का विचार कर रही है। यदि वित्त-मंत्री तथा उनके मंत्रालय के दिमाग में अनुच्छेद 277 होगा, तो वे सब साधनों को ग्रहण करना चाहेंगे, जिससे प्रान्तों के पास कुछ नहीं बचेगा और आपात के समय केन्द्र 277 का प्रयोग करेगा और केन्द्र द्वारा एकत्रित सब प्रान्तीय साधनों को छीन लेगा। कौन कहता है कि आपात के समय का मंत्रिमंडल आज के मंत्रिमंडल से अधिक लोकतंत्रीय होगा? इस सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न सदन के आंगन पर संघीय वित्तों के सम्बन्ध में वाद-विवाद के समय वित्त-मंत्री तथा वित्त मंत्रालय ने जो सहानुभूति प्रदर्शित की है, उससे सिद्ध होता है कि आपात के समय प्रान्तों को बहुत कम न्याय मिलेगा, सद्व्यवहार की तो बात की क्या है। मान लीजिये, हमारे यहां ऐसा मंत्री हो जो ज़रा ज़रा सी घटनाओं पर घबरा जाये, जो बहुत महत्वाकांक्षी हो जाये। द्वितीय विश्व विश्व युद्ध में भारत सरकार अपनी कार्यपालिका परिषदों के द्वारा अत्यधिक महत्वाकांक्षी बन गई थी और उसने अध्यादेशों द्वारा हमारे सब साधनों को ले लिया था। इस प्रकार कौन संदेह कर सकता है कि केन्द्रीय सरकार को अंग्रेज़ी सरकार के समान ही महत्वकांक्षा से अथवा अज्ञानवश अध्यादेश पारित करने का अधिकार है? उन्होंने 'नियंत्रण' मूल्य निश्चित किये और अपने लिये तथा अपने साथी देशों के लिये यथेष्ट सामान ले लिया और उसका परिणाम यह है कि भारत में मुद्रास्फीति का ज़ोर है, और अब मूल्य युद्धपूर्व के स्तर के 365 प्रतिशत है,

जबकि अमरीका में 200 प्रतिशत है और ब्रिटेन में लगभग 100 प्रतिशत है। 'नियन्त्रण' मूल्यों का और नियंत्रित क्रमों का यह परिणाम है।

हमें आशा करनी चाहिये कि युद्ध नहीं होगा, आपात नहीं होगा। मैं चाहता हूं भारत में शांति रहे, विश्व में शांति रहे। किन्तु मान लीजिये, दुर्भाग्यवश आपात उत्पन्न हो जाये, तो कौन कष्ट सहन करता है? जनता। जनता को ही कष्ट सहन करना पड़ता है और नियंत्रित मूल्यों पर माल देना पड़ता है जैसा कि उन्होंने 1939 से 1947 के बीच किया था। मुद्रा स्फीति का क्या अर्थ है? इसका यह अर्थ है कि प्रान्तीय सरकारें और जनता अपना गुजारा नहीं कर सकतीं, और यदि वित्त-मंत्री अत्यधिक महत्वाकांक्षी हो तो वह राष्ट्रपति से अनुच्छेद 277 का प्रयोग करवा कर प्रान्तों के सब साधनों को छीनना आरम्भ कर देगा। वह राशि कितनी है—आयकर का लगभग 60 प्रतिशत; उत्पादन शुल्कों को 40 प्रतिशत और कुछ प्रान्तों में पटसन-शुल्क का 40 प्रतिशत; अब यह राशि लगभग 60 करोड़ रुपये बैठती है।

यदि यह सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न सदन सरकार-समिति के प्रतिवेदन को स्वीकार कर लेता, तो प्रान्तों को आय-कर के समस्त साधनों का 60 प्रतिशत मिल जाता (जो लगभग 150 करोड़ रुपये होता है) और उत्पादन शुल्कों के अंश का लगभग 60 प्रतिशत मिल जाता, जो बहुत बड़ी राशियां हो जातीं। यदि आप कृपया अनुमति दें, तो मैं उड़ीसा के निर्देश द्वारा अपनी बात का उदाहरण देता हूं। उड़ीसा की कुल आय 6.82 करोड़ है, जिसमें से लगभग 3 करोड़ रुपये असाधारण अनुदानों के रूप में केन्द्र से मिलता है। इसका अर्थ यह है कि उड़ीसा की नकद आय केवल 3.82 करोड़ ही है। उड़ीसा में लोगों का जीवनस्तर बहुत ही, बहुत ही निम्न है।

***उपाध्यक्षः** क्या ये सब विस्तार की बातें आवश्यक हैं? क्या माननीय सदस्य कृपया अपनी वक्तृता समाप्त करेंगे?

***श्री बी. दासः** मैं तो बहुत चाहता हूं कि कर दूं। किन्तु मैं तो उन प्रान्तों के हृदय की भावना ही व्यक्त कर रहा हूं, जो उस थोड़े से अंश से भी वंचित हो जायेंगे, जो अब तक उन्हें केन्द्रीय करों के भाग के रूप में केन्द्र से मिलता है। मैं, हमारे प्रशासनों के स्तरों के उदाहरण देने के लिये कुछ आंकड़े देता हूं।

शिक्षा पर बम्बई 5 आने एक पाई खर्च करता है; संयुक्त प्रान्त 6.5 आने व्यय करता है; बिहार 3.11 आने व्यय करता है; आसाम 6.2 आने व्यय करता है, जबकि उड़ीसा 4.1 आने व्यय करता है। यदि आप लोक-स्वास्थ्य तथा औषधि को लें—जिनके विषय में हम सदा चर्चा करते हैं—तो आंकड़े और भी निरुत्साहप्रद हैं। मध्य प्रदेश 2.1 आने प्रति व्यक्ति व्यय करता है; आसाम 3.1 आने व्यय करता है। उड़ीसा बहुत कम व्यय करता है।

प्रान्तों की यह हालत है और आज हमें कहा जाता है कि अनुच्छेद 277 को पारित कर दें जिससे प्रांतों का निम्न जीवनस्तर और भी अधिक नीचा हो जायेगा। मैं बहुत चिन्तित हूं, मुझे बहुत क्षोभ है। मेरे विचार में लोकतंत्र से एकतंत्र नहीं

[श्री बी. दास]

बनेगा जिससे फेन्केन्स्टीन और दक्षिणी अमरीका के राष्ट्रपति बने जो सब कुछ कर सकते हैं। मैंने इस संविधान का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है। मैं देखता हूं कि राष्ट्रपति किसी समय निरंकुश बन सकता है; वह अपने मंत्रिमंडल को पदच्युत कर सकता है और विधानमंडल को विघटित कर सकता है। ऐसा आदर्श संविधान बनाने से कोई लाभ नहीं है, जिसे कोई भी राष्ट्रपति उलट सकता है; और किसे पता है कि गांधीवादी ही भारत पर सदा शासन करेंगे।

मुझे हृदय में बहुत दु:ख है—मैं अपने माननीय मित्र पंडित कुंजरू के कथन का पूरा समर्थन करता हूं और मुझे बंगाल की महिला सदस्या श्रीमती रेणुका राय से पूरी सहानुभूति है, जिन्होंने अपने प्रान्त की ओर से अनुरोध किया है। आसाम भी बोल चुका है और उड़ीसा दो बार बोल चुका है। अत: मेरा ख्याल है कि डॉ. अम्बेडकर अनुच्छेद 277 को वापस ले लेंगे या उसकी पुनर्रचना करके उन प्रान्तों की इच्छा पूरी करेंगे।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न पर मत लिये जायें।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैंने अपने माननीय मित्र पंडित कुंजरू के संशोधन पर यथासंभव अधिक ध्यान दिया है, और मुझे खेद है कि मैं उनसे सहमत नहीं हूं, क्योंकि मुझे ऐसा अनुभव होता है कि उनका संशोधन मुख्यत: अनावश्यक ही है।

आरम्भ में हमें यह जान लेना चाहिये कि केन्द्र और प्रान्तों में साधारणत: क्या वित्तीय सम्बन्ध होंगे। मेरे विचार में अब तक पारित अनुच्छेदों से यह स्पष्ट है कि साधारणत: प्रान्तों को केन्द्र से निम्न राशियां मिलेगी:

(1) अनुच्छेद 251 के अन्तर्गत आय-कर की राशि;

(2) अनुच्छेद 253 के अन्तर्गत केन्द्रीय उत्पादन शुल्कों का अंश; और

(3) अनुच्छेद 255 के अन्तर्गत कुछ अनुदान और सहायतायें।

मैं पटसन शुल्क को नहीं ले रहा हूं, क्योंकि उसका आधार भिन्न है और वह विधिरूप में प्रत्याभूत कर दी गई है।

हमें यह भी समझ लेना चाहिये कि मेरे द्वारा प्रस्तावित अनुच्छेद में क्या सुझाव है। उसमें यह प्रस्थापना है कि जब आपात की उद्घोषणा हो जाये, तब राष्ट्रपति को यह अधिकार होना चाहिये कि वह आय-कर, उत्पादन-कर तथा उन अनुदानों की राशि को पुन: वितरित करने की शक्ति ले सके, जो केन्द्र अनुच्छेद 255

के उपबन्धों के अधीन देगा। मेरे द्वारा प्रस्थापित अनुच्छेद से राष्ट्रपति को स्वविवेक की शक्ति मिलती है कि वह इन शीर्षकों के अधीन विवरण को बदल सके। मस्विदा समिति ने सदन को अनुच्छेद का जो मस्विदा पेश किया है, उसकी यही स्थिति है।

अब मेरे मित्र पंडित कुंजरू के संशोधन में क्या बात है? यदि उनको ठीक समझा हूं। तो वे मस्विदा समिति की इस बात से असहमत नहीं हैं कि मेरे द्वारा निर्देशित तीन मदों में से दो को बदलने का पूरा अधिकार राष्ट्रपति को होना चाहिये, अर्थात् वे राष्ट्रपति को इस बात का पूरा अधिकार देने के लिये तैयार हैं कि वह उस वितरण को बदल सके, जो केन्द्र उत्पादन शुल्क में से प्रान्तों को देता है और उन अनुदानों को बदल सके जो केन्द्र अनुच्छेद 255 के अन्तर्गत देता है। यदि मैं उनको ठीक समझा हूं, तो उन्हें इस बात में कोई कठिनाई नहीं होगी, यदि राष्ट्रपति आदेश द्वारा उस अंश को पूर्णतः समाप्त कर दे, जो साधारणतः केन्द्र उत्पादन करों और अनुदारों में से प्रान्तों को देने के लिये बाध्य होगा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** (युक्त प्रान्तः जनरल): मैंने ऐसी कोई बात नहीं कही।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** आपके संशोधन में केवल आय-कर की ही चर्चा है। मैं यही बताने का प्रयत्न कर रहा हूं। आपके संशोधन में यह सुझाव नहीं है कि उत्पादन शुल्कों या अनुच्छेद 255 के अन्तर्गत केन्द्र द्वारा दिये गये अनुदानों के विषय में कोई भिन्न प्रणाली होनी चाहिये।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** मैंने अपना संशोधन उस रूप में बनाया था, उसका कारण यह है। जहां तक करों की आय का वितरण संसद द्वारा पारित विधि पर निर्भर है, उस हद तक वह शक्ति संसद से नहीं ली जा सकती, पर वह शक्ति राष्ट्रपति में नहीं है। पर जहां तक आय-कर का सम्बन्ध है, भारत-शासन-अधिनियम 1935 में ऐसी व्यवस्था थी कि प्रान्तों का पूरा भाग उन्हें एक खास अवधि में ही मिल जायेगा और गवर्नर जनरल को यह अनुमति थी कि, यदि आपात हो तो, प्रान्तों को वह राशि हस्तान्तरण करने में देर की जा सकती थी और इस प्रकार वह कालावधि बढ़ाई जा सकती थी जिसमें कि प्रान्तों को पूर्ण भाग मिलेगा। केवल यही कारण था; मेरे माननीय मित्र ने जो निष्कर्ष निकाला है, वह नितान्त अनुचित है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** संशोधन का सर्वाधिक स्वाभाविक निष्कर्ष निकालने का मुझे हक है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** माननीय सदस्य मेरी बात को बिल्कुल गलत समझ रहे हैं। मेरे संशोधन के अन्तर्गत राष्ट्रपति को संघीय उत्पादन शुल्कों के वितरण को बदलने की कोई शक्ति नहीं होगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मुझे खेद है कि माननीय सदस्य ने अपने संशोधन में मामले को स्पष्ट नहीं किया है। और यदि वे अब नया अर्थ निकालना चाहते हैं और कोई मूल परिवर्तन करना चाहते हैं, तो संशोधन ऐसा होना चाहिये

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

था, जिससे मुझे पूर्ण सूचना मिल जाती कि उनकी क्या इच्छा थी। संशोधन में कोई ऐसी बात नहीं है जिससे यह पता लग सके कि माननीय सदस्य अनुच्छेद 253 तथा 255 के उपबन्धों को बदलना चाहते हैं। यह अनुविचार हो सकता है, किन्तु मैं अनुविचारों पर विचार नहीं कर सकता; मैं तो संशोधन पर उसी रूप में विचार करूंगा जिस रूप में वह भेजा गया है। अतः जब मैंने उस संशोधन को पढ़ा, तो मेरा अर्थ स्वाभाविक ही है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** माननीय सदस्य की बात बिल्कुल अनुचित है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह तो माननीय सदस्य का मत है। मेरा यह ख्याल है कि कुछ नई चीज़ पेश की जा रही है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** माननीय सदस्य मेरी बात का गलत अर्थ बता रहे हैं और वे जानबूझकर ऐसा कर रहे हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** माननीय सदस्य अपने ही विचारों का गलत अर्थ बता रहे हैं। अतः मैं तो यह समझता हूं कि मेरे माननीय मित्र के इस सुझाव में यह प्रश्न ही नहीं है कि उत्पादन शुल्क और अनुदान की प्रणाली में परिवर्तन किया जाये। उन्होंने तो आपात में आय-कर के वितरण में परिवर्तन करने का ही प्रश्न उठाया था। फिर भी मैं क्या देखता हूं? यदि मैं उनके संशोधन को शुद्ध रूप में पढ़ूं तो वे उस स्वविवेक को बिल्कुल समाप्त नहीं कर रहे हैं, जो आय कर के वितरण को बदलने के विषय में राष्ट्रपति के पास शेष रह गया है। वे तो केवल इतना ही कर रहे हैं कि यदि राष्ट्रपति पिछले आदेश में उल्लिखित आय कर के वितरण में रूपभेद करे, तो राष्ट्रपति को एक विशेष पद्धति पर चलना होगा, जो उन्होंने संशोधन में लिखी है। दूसरे शब्दों में मेरे द्वारा प्रस्थापित खंड के मस्विदे में और मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू के संशोधन में केवल यही अन्तर है कि जहां तक राष्ट्रपति के स्वविवेक का सम्बन्ध है, उसे अविनियमित नहीं छोड़ना चाहिये, उसका विनियमन उनके सुझाये हुए तरीके से होना चाहिये।

उस पर मेरा उत्तर यह है: ऐसा विश्वास करने का कारण कहां है कि आय कर के वितरण सम्बन्धी उपबन्धों को बदलने में या उस शक्ति के प्रयोग में वह ऐसी मनमानी करेगा कि आयकर की सारी ही आमदनी को ले लेगा? यह विश्वास करने का भी कारण कहां है कि राष्ट्रपति उस सुझाव को भी नहीं मानेगा, जो मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू ने अपने संशोधन में दिया है? ऐसा समझने का या मनमाना सुझाव देने का कोई कारण नहीं है कि राष्ट्रपति उन भागों का बिल्कुल समाप्त कर देगा, जो प्रान्तों को वितरण में पाने का हक है। आखिर राष्ट्रपति एक युक्तिपूर्ण व्यक्ति होगा; उसे पता होगा कि बहुत हद तक आय-कर का अंश प्रान्तों के राजस्व का भाग होता है; और उसे यह भी पता होगा कि, चाहे आपात हो, फिर भी केन्द्र की सहायता करना जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक यह भी है कि प्रान्तों का काम चलता रहे।

अतएव मेरे विवेकानुसार राष्ट्रपति के हाथ एक विशेष प्रणाली से कार्य करने के लिये बांध देने की कोई आवश्यकता नहीं है, जैसे कि मेरे मित्र पंडित कुंजरू के संशोधन में सुझाव दिया गया है। हो सकता है कि राष्ट्रपति प्रान्तों से परामर्श करके या वित्त आयोग से बात करके या किसी अन्य विशेषज्ञ प्राधिकारी से परामर्श करके आपात में आयकर को निबटाने का कोई अन्य उपाय निकाल ले, और उस वक्त उसे जो सुझाव मिले वह उससे कहीं अच्छा हो, जो कि मेरे मित्र पंडित कुंजरू रख रहे हैं। अतः मेरे विचर में यह बहुत गलत बात होगी कि राष्ट्रपति के हाथ बांध दिये जायें कि वह एक विशेष तरीके से काम करे और उसे स्वतंत्रता या स्वविवेक की शक्ति न दी जाये कि अन्य उपायों से कार्य करे जो कि उसे सुझाये जायें। मेरा सुझाव है कि मस्विदे को ऐसा ही लचकीला छोड़ दिया जाये, जैसा कि मस्विदा समिति की प्रस्थापना में है; मेरे मित्र पंडित कुंजरू के संशोधन को स्वीकार करने से कोई लाभ नहीं होगा।

जैसा, कि मैंने कहा है, मैंने मूल मस्विदे में, जिससे कि यह मामला पूर्णतः और बिल्कुल राष्ट्रपति के स्वविवेक पर ही छोड़ किया गया था और संसद को इसमें बोलने का कोई हक नहीं था, एक और संशोधन कर दिया है। मैंने जो नया संशोधन प्रस्थापित किया है, उससे संसद के लिये किसी ऐसे आदेश पर विचार करना संभव है, जो राजस्व के वितरण के विषय में राष्ट्रपति द्वारा निकाला जाये; और इसलिये यदि राष्ट्रपति कोई ऐसी बात कर रहा है, जो प्रान्तों के हितों के लिये बहुत हानिकर हो सकती है, तो संसद में निस्संदेह बहुत से प्रतिनिधि मामले को ठीक कर सकेंगे जो कि प्रान्तों से आयेंगे और निस्संदेह प्रान्तों के हितों को नहीं भूलेंगे। अतः मेरे विचार में मूल योजना को रहने देना चाहिये क्योंकि मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू के सुझाव से अधिक लचकीली है।

***उपाध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 277 को अनुच्छेद 277 का खंड (1) बना दिया जाये और इस प्रकार बने कथिक अनुच्छेद में निम्न खंड जोड़ दिया जाये:—

'(2) Every order made under clause (1) of this article shall, as soon as soon as may be after it is made, be laid before each House of Parliament."

[(2) इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन दिया प्रत्येक आदेश, उसके दिये जाने के पश्चात् यथासम्भव शीघ्र, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जायेगा।]

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्षः** प्रश्न यह है:—

"संशोधन सूची के संशोधन संख्या 3007 तथा संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 13 के निदेश से, अनुच्छेद 277 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:–

'277. (1) While a proclamation of Emergency is in operation, the Union may, notwithstandinganything contained in Article

[उपाध्यक्ष]

Modification of the Provisions relating to distribution of taxes on income during the period a Proclamation of Emergency is in operation.

251 of this Constitution, retain out of the moneys assigned by clause (1) of that article to States in the first year of a prescribed period such sum as may be prescribed and thereafter in each year of the said prescribed period a sum less than retained in the preceding year by an amount, being the same amount in each year, so calculated that the sum to be retained in the last year of the period will be equal to the amount of each such annual deduction:

Provided that the President may in any year of the said prescribed period direct that the sum to be retained by the Union in that year shall be the sum retained in the preceding year and that the said prescribed period shall be correspondingly extended, but he shall not give any such direction except after consultation with the States nor shall he given any such direction unless he is satisfied that the maintenance of the financial stability of the Government of India requires him so to do.

(2) In his article, 'prescribed' means prescribed by the President by Order.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 277 संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 277 संविधान में जोड़ दिया गया।

नवीन अनुच्छेद 279-क

***उपाध्यक्ष:** पंडित ठाकुरदास भार्गव अपना संशोधन संख्या 73 पेश कर सकते हैं, जो नया अनुच्छेद 279-क जोड़ने के लिये है। उनका एक संशोधन अनुच्छेद 280 पर भी है, जो बिल्कुल वैसी ही भाषा में है जैसा कि संशोधन संख्या 73 है। मैं उनसे जानना चाहता हूं कि वे इसे नये अनुच्छेद के रूप में पेश

करता चाहते है, या इसे अनुच्छेद 280 के संशोधन के रूप में प्रस्थापित करना चाहते हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब: जनरल): श्रीमान, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 के निर्देश से अनुच्छेद 179 के पश्चात् निम्न नया अनुच्छेद जोड़ दिया जाये:—

"279. A. Any law made or any executive action taken under article 279 in derogation....."

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** एक औचित्य प्रश्न है, उपाध्यक्ष महोदय। यह तो अनुच्छेद 280 के संशोधन के रूप में पेश होना चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** किन्तु वे इसे अनुच्छेद 279 के पश्चात् नये अनुच्छेद के रूप में अभी ही पेश करना चाहते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** फिर अनुच्छेद 280 भी पेश कर दिया जाये और सब बात पर इकट्ठा ही विचार हो जाये।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** मुझे ऐसा करने पर कोई आपत्ति नहीं है।

***उपाध्यक्ष:** मेरे विचार में अनुच्छेद 280 के पेश होने के पश्चात् पंडित भार्गव अपने संशोधन 74 को पेश कर सकते हैं। संशोधन संख्या 73 के पेश करने के स्थान पर वे संशोधन संख्या 74 को पेश कर सकते हैं, जब डॉ. अम्बेडकर अनुच्छेद 280 को पेश कर चुके।

अनुच्छेद 280

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 280 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:

'280. (1) Where a Proclamation of Emergency is in operation, the President may by order declare that the right to move any court for the enforcement of such of the rights conferred by Part III of this Constitution as may be mentioned in the order and all proceedings pending in any court for the enforcement of the

Suspension of the rights guaranteed by article 25 of the Constitution during emergencies.

rights so mentioned shall remain suspended for the period during which the Proclamation is in force or for such shorter period as may be specified in the Order.

(2) An order made as aforesaid may extend to the whole or any part of the territory of India.

(3) Every order made under clause (1) of this article shall as soon as may be after it is made be laid before each House of Parliament."

आपात में संविधान के अनुच्छेद 25 द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों का निलम्बन।

[280. (1) जहां कि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, वहां राष्ट्रपति आदेश द्वारा घोषित कर सकेगा कि इस संविधान के भाग 3 द्वारा दिये अधिकारों में से ऐसों को प्रवर्तित कराने के लिये, जैसे कि इस आदेश में वर्णित हों, किसी न्यायालय के प्रचालन का अधिकार तथा इस प्रकार वर्णित अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिये किसी न्यायालय में लम्बित सब कार्यवाहियां उस कालावधि के लिये, जिसमें कि उद्घोषणा लागू रहती है अथवा उससे छोटी ऐसी कालावधि के लिये, जैसी कि आदेश में उल्लिखित की जाये, निलम्बित रहेगी।

(2) उपरोक्त प्रकार दिया हुआ आदेश, भारत के समस्त राज्य-क्षेत्र में अथवा उसके किसी भाग पर विस्तृत हो सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन दिया प्रत्येक आदेश उसके दिये जाने के पश्चात् यथासंभव शीघ्र संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जायेगा।]

श्रीमान, सदन यह समझ लेगा कि खंड (2) और (3) पुराने अनुच्छेद में जोड़े गये हैं। पुराने अनुच्छेद में एक उपबन्ध था कि जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में हो तब राष्ट्रपति भाग 3 के अधिकारों के उपबन्धों को भारत भर में निलम्बित कर सकता है। अब यह निर्णय हुआ है कि चाहे आपात हो, फिर भी यह सर्वथा संभव है कि भाग 3 के अधिकारों को कुछ क्षेत्रों में यथापूर्व रहने दिया जाये, और केवल उद्घोषणा मात्र से वे भारत भर में पूर्णतः निलम्बित नहीं हों, इसके फलस्वरूप अनुच्छेद के मस्विदे में खंड (2) प्रविष्ट कर दिया गया है, जिससे कि यह उपबन्ध हो जाये।

तीसरी बात, मूल अनुच्छेद में ऐसा कोई उपबन्ध नहीं था, जिससे कि खंड (1) के अधीन निकाले गये आदेश के मामले में संसद को कुछ कहने का हक्क हो जाये। सदन की यह इच्छा थी कि निलम्बन का आदेश पूर्णतः राष्ट्रपति के हाथ में ही न रहे, इसलिये अब यह उपबन्ध कर दिया गया है कि ऐसा आदेश संसद के समक्ष पेश किया जायेगा, निस्संदेह यह आनुषंगिक उपबन्ध है ही कि संसद को इच्छानुसार कार्यवाही करने का अधिकार होगा ही।

***उपाध्यक्षः** अब पंडित ठाकुरदास भार्गव संशोधन संख्या 74 पेश कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** तृतीय सप्ताह की सूची 1 में अन्य संशोधन हैं।

***उपाध्यक्षः** मैं उन सबको लेता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** सूची 1 को पहले ले लिया जाये।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** आपकी अनुमति से मैं चाहता हूं कि नये अनुच्छेद 279-क के लिये संशोधन संख्या 73 और अनुच्छेद 280 पर संशोधन संख्या 74 को पेश करूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** प्रस्तावित नया अनुच्छेद आज की कार्यावलि में नहीं है।

***उपाध्यक्षः** पंडित ठाकुरदास भार्गव को संशोधन संख्या 74 पेश करना है। यही तय हुआ था।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** बात यह है कि यदि नया अनुच्छेद 279-क स्वीकृत हो जाता है, मुझे अनुच्छेद 280 के संशोधन को छोड़ देने में कोई आपत्ति नहीं है।

***उपाध्यक्षः** आप कुछ समय पूर्व सहमत हो गये थे कि आप नये अनुच्छेद 279-क सम्बन्धी संशोधन को अनुच्छेद 280 के संशोधन के रूप में पेश करेंगे।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** मेरा निवेदन है कि मैंने दो संशोधनों संख्या 73 और 74 की सूचना भेजी थी। दोनों का सार एक ही है। किन्तु एक में अनुच्छेद 280 के स्थान पर दूसरा अनुच्छेद रखने का सुझाव है, दूसरे में नया अनुच्छेद 279-क रखने का सुझाव है। साथ ही, दोनों संशोधनों का उद्देश्य बिल्कुल भिन्न है। अतः आप मुझे दोनों को पेश करने की अनुमति दीजिये।

***उपाध्यक्षः** बहुत अच्छा, आप बोल सकते हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:—

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 के निर्देश से अनुच्छेद 279 के पश्चात् निम्न नया अनुच्छेद जोड़ दिया जाये:

'अनुच्छेद 179 के अधीन बनाई गई कोई विधि या की गई कोई कार्यवाही, जो संविधान के भाग 3 के अनुच्छेद 13 के उपबन्धों का अल्पीकरण करती हो, केवल उसी कालावधि तक रहेगी जो कि उस भाग में परिभाषित राज्य द्वारा आवश्यक समझी जाये और किसी भी अवस्था में उस कालावधि से अधिक समय तक न रहेगी, जिस कालावधि में आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में रहे।' "

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:—

'280. Any law made or executive action taken under article 279 shall ensure for such period only as is considered necessary by the

State as defined in Part III of the Constitution and in no case for a period longer than the period during which a Proclamation of Emergency remains in force."

(280. अनुच्छेद 279 के अधीन बनाई गई कोई विधि या की गई कोई कार्यपालिका कार्यवाही केवल उसी कालावधि तक रहेगी जो भाग 3 में परिभाषित राज्य आवश्यक समझे और किसी भी अवस्था में उस कालावधि से अधिक समय तक न रहेगी, जिसे कालावधि में आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में रहे।)

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में प्रस्तापित अनुच्छेद 280 के खंड (1) में 'a Proclamation of Emergency' इन शब्दों के पश्चात् 'under article 275 (1) of the Constitution' ये शब्द, अंक तथा कोष्टक प्रविष्ट कर दिये जायें।"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (2) में अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

'for a period during which the Proclamation is in force or for such shorter period as may be specified.'

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (2) के पश्चात् निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:—

'(2A) Any such order may be revoked or varied by a subsequent order.' "

[(2क) ऐसे किसी आदेश को बाद के आदेश द्वारा समाप्त किया या बदला जा सकता है।]"

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (3) में अन्त में निम्न जोड़ दिया जाये:—

'and shall cease to operate at the expiration of one month unless before the expiration of that peirod it has been approved by resolutions of both Houses of Parliament:

Provided that if any such order is issued at a time when the House of the People has been dissolved or if the dissolution of the House of the People takes place during the period of one month referred to in clause (3) of this article and the order has not

been approved by a resolution passed by the House of the People before the expiration of that period, this order shall cease to operate at the expiration of fifteen days from the date on which the House of the People first sits after its reconstitution unless before the expiration of that period resolutions approving the order have been passed by both Houses of Parliament.' "

श्रीमान, मैं सदन से प्रार्थना करता हूं कि वह अनुच्छेद 279 पर, जो हमने अभी पारित किया है और अनुच्छेद 280 पर एक साथ विचार करे और हमने अनुच्छेद 279 के अधीन जो कुछ पारित किया है, उसे ध्यान में रखते हुए अनुच्छेद 280 के प्रभाव पर अनुच्छेद 279 के साथ विचार करे।

जहां तक अनुच्छेद 279 का सम्बन्ध है, अब तक हमने यह स्वीकार किया है:—

"जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब अनुच्छेद 13 की किसी बात से राज्य की कोई ऐसी विधि बनाने की अथवा कोई कार्यपालिका कार्यवाही करने की भाग 3 में परिभाषित शक्ति, जिसे वह राज्य उस भाग में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अभाव में बनाने अथवा करने के लिये सक्षम होता, निर्बन्धित नहीं होगी।"

जब हमने यह अनुच्छेद 279 पारित कर दिया है, तो इसका यह परिणाम निकलता है कि वास्तव में हमने कार्यपालिका को बहुत विस्तृत शक्तियां दे दी हैं, क्योंकि मूलाधिकारों के सम्बन्ध में अनुच्छेद 13 के परन्तुकों द्वारा आरोपित निर्बन्धन वास्तव में हटा दिये गये हैं। जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में हो, तब कार्यपालिका किसी विधि को बदल सकती है और कोई विधि बना सकती है, जो मूलाधिकारों, वाक्स्वातन्त्र्य आदि के विषय में हो, और कानून द्वारा धारा 13 के अधीन जो निर्बन्धन लगाये गये हैं वे प्रभावी नहीं होंगे, जिसका अर्थ यह है कि आपात की कालावधि में कार्यपालिका निरंकुश शक्तियों से लैस होगी।

अब यदि आप कृपया 280 को देखें, तो वह अनुच्छेद 279 से आधा भी कठोर नहीं है। अनुच्छेद 280 जिस रूप में अब मस्विदा में से निकलकर आया है, इसमें से कांटा निकल गया है। यदि आप कृपा करके मूल धारा 280 को देखेंगे, तो सदन इस परिणाम पर पहुंचेगा कि अनुच्छेद का मूल मस्विदा विद्यमान मस्विदे से कहीं अधिक कठोर था। संविधान के मस्विदे में पुराना अनुच्छेद 280 इस प्रकार था:—

"Where a Proclamation of Emergency is in operation, the President may be order declare that *the rights* guaranteed by article 25 of this Constitution shall *remain suspended* for such period not extending *beyond a period of six month* after the proclamation has ceased to be in operation as may be specified in such order."

[जहां आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, वहां राष्ट्रपति आदेश द्वारा घोषणा कर सकेगा कि इस संविधान के अनुच्छेद 25 के द्वारा प्रत्याभूत अधिकार ऐसे

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

आदेश में उल्लिखित ऐसी अवधि के लिये निलम्बित रहेंगे, जो उस घोषणा के प्रवर्तन-शून्य होने के पश्चात् छः मास की अवधि से परे विस्तृत न हो सकेगी।]

अर्थात् अनुच्छेद 280 के अनुसार अनुच्छेद 25 में उल्लिखित सब अधिकार निलम्बित रहते। इन अधिकारों को क्रियान्वित कराने के लिये उच्चतम न्यायालय को प्रचालित करने का अधिकार तथा उस अधिकार की प्रत्याभूति ही नहीं, वरन् वे अधिकार ही छिन जाते। अब उच्चतम न्यायालय को प्रचालित करने की प्रत्याभूति छीनने में और भाग 3 में प्रत्याभूति अधिकारों को ही छीनने में बहुत अन्तर है। यदि अधिकारों को नहीं छीना जाता है, तो स्थिति बहुत सुरक्षित है और उच्चतम न्यायालय तथा अन्य नागरिक देश की घोषित विधि के विरुद्ध नहीं जा सकते, केवल समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय को प्रचालित करने का अधिकार ही छिनता है। विधियां पहले के समान ही रहेंगी, पर यदि विधि को बदलने की शक्ति छीन ली जाती है, जैसा कि अनुच्छेद 279 में किया गया है, तो ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसमें कार्यपालिका अत्यधिक निरंकुश बन जाती है। वे जो चाहें कर सकते हैं; वे कुछ भी विधि पारित कर सकते हैं, यदि वे संसद से उसे अधिनियमित करवा सकें, अतः अनुच्छेद 279 प्रभाव में अनुच्छेद 280 से कहीं अधिक कठोर है। यदि आप कृपया अनुच्छेद 279 को देखें, तो पता लगेगा कि आपात के काल में आप कार्यपालिका को प्राधिकार देते हैं कि वह अनुच्छेद 279 के उपबन्धों की चिन्ता न करते हुए कोई कार्यवाही कर सकती है, और इसी प्रकार आप विधानमंडल को, जैसा कि अनुच्छेद 7 में परिभाषित है, प्राधिकृत करते हैं कि वह कोई विधि पारित कर सकता है और वे रक्षणकवच तथा निर्बन्धन लागू नहीं होंगे, जो कि संविधान में सोच समझकर अनुच्छेद 13 के सम्बन्ध में रखे गये हैं, और इसका परिणाम यह होगा कि यदि उस कालावधि में कोई कार्यवाही की जायेगी या विधि पारित की जायेगी तो वह कार्यवाही और विधि सदा के लिये ठीक होगी। अनुच्छेद 279 में यह नहीं लिखा है कि जो कार्यवाही की जायेगी या विधि पारित की जायेगी, वह केवल आपात की कालावधि के लिये या तत्पश्चात् छः मासों तक के लिये ही लागू होगी और उस विषय पर अनुच्छेद 279 बिल्कुल चुप है। अतः इस कालावधि में अधिनियमित कोई विधि चलती रहेगी, जब तक कि उसका निरसन या समाप्ति न की जाये। मेरे संशोधन में इस कालावधि को निर्बन्धित करने का उपबन्ध है और मैं चाहता हूं कि इस कालावधि में पारित कोई विधि या इस काल में की गई कोई कार्यपालिका सम्बन्धी कार्यवाही, जो अनुच्छेद 279 के उपबन्धों के अधीन हो, केवल आपात के समय में ही प्रभावी रहे या उस न्यूनतर समय के लिये प्रभावी रहे, जो कि उस विधि को अधिनियमित करने वाला राज्य या उस कार्यवाही को करने वाली कार्यपालिका आवश्यक समझे।

अतः चाहे हम अनुच्छेद 280 के विषय में कुछ भी करें, यह बिल्कुल आवश्यक है कि आप अनुच्छेद 279-क को अधिनियमित करने के लिये सहमत हो जायें। अन्यथा प्रभाव यह होगा कि आपात में ली गई शक्तियां और उस काल में की कई कार्यवाही और बनाई गई विधि सदा के लिये प्रभावी रहेगी, जब तक कि उसका निरसन या समाप्ति न की जाये। यदि आप इस संशोधन को स्वीकार कर लेते हैं, तो ज्योंही आपात समाप्त होगा और सामान्य स्थिति उत्पन्न हो जायेगी, त्यों

ही उस कार्यवाही या विधि का प्रभाव स्वत: समाप्त हो जायेगा और वह कार्यवाही तथा विधि स्वत: ही निरसित हो जायेगी और समाप्त हो जायेगी। अनुच्छेद 280 के सम्बन्ध में मैं सदन से प्रार्थना करता हूं कि वह इस पर विचार करने से पूर्व इसके सब आशय को समझ ले। "आपात" शब्द की कहीं परिभाषा नहीं की गई है और मेरे एक मित्र ने डॉ. अम्बेडकर को सुझाव दिया था कि वे "आपात" शब्द की परिभाषा कर दें और मैंने डॉ. अम्बेडकर से कहा था कि यदि वे "आपात" शब्द की परिभाषा करने में सफल हो गये, तो वह निस्संदेह उनका अलौकिक कार्य होगा, क्योंकि "आयात" शब्द ऐसा है कि आप संभवत: इसकी परिभाषा नहीं कर सकते। यदि तो कार्यपालिका विशेष पर ही निर्भर है कि वह कहे कि आपात उत्पन्न हो गया है और एक साधारण से आपात से किसी राज्य की कार्यपालिका व्याकुल हो सकती है। एक बुलबुला भी किसी समय पहाड़ बन सकता है और सत्य का महानतम पर्वत दिखाई देने वाला भी बालू की भीत के समान ढह सकता है। कोई भी पहले से देख नहीं सकता और कह नहीं सकता कि असल में गड़बड़ कैसी बढ़ जायेगी। अत: एक घबराने वाला मंत्रिमंडल शीघ्र ही आपात की घोषणा कर देगा, जबकि शक्तिशाली और साहसी मंत्रिमंडल ऐसी स्थिति में यह घोषणा नहीं करेगा कि आपात उत्पन्न हो गया है। यह तो मंत्रिमंडल की नाड़ी पर तथा रीढ़ पर निर्भर है कि वे इस प्रश्न को कैसे निबटाते हैं। अत: मेरे विचार में हमें यह नहीं समझना चाहिये कि विद्यमान मंत्रिमंडल सदा ही रहेगा या कि भविष्य में ऐसे मंत्रिमंडल नहीं होंगे जो शायद वैसा विचार न करें जैसी कि हमारे विद्यमान मंत्रिमंडल से आशा की जाती है। अत: हमें सावधान होना चाहिये और यह देखना चाहिये कि हम कार्यपालिका को ऐसी ही शक्तियों से लैस करें कि जो आवश्यक हैं, जिससे कि किसी घबराने वाले मंत्रिमंडल के कारण जनता की स्वतंत्रतायें जोखम में न पड़ें। अत: हमें यह देखना है कि हम ऐसे ही उपबन्ध बनायें जिससे कि कार्यपालिका अत्यधिक शक्ति से लैस न हो जाये।

यह सब कुछ कहने करने के पश्चात् संसद वैकल्पिक प्राधिकारी है। यदि हम अनुच्छेद 280 की कुछ शक्तियां संसद को दे दें तो ठीक रहेगा। इसी दृष्टिकोण से मैंने इस अनुच्छेद पर दूसरे संधोधन रखे हैं।

इस विषय में मैं सर्वप्रथम सदन का ध्यान संशोधन संख्या 75 की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं। जहां तक इस संशोधन का सम्बन्ध है, मेरे विचार में यह केवल स्पष्टीकरण ही है। मैं कह चुका हूं कि आपात की उद्घोषणा केवल अनुच्छेद 275 (1) के अधीन ही की जा सकती है। अनुच्छेद 278 के अन्तर्गत आपात की उद्घोषणा करने का कोई विचार नहीं है। मैं इस बात को बिल्कुल स्पष्ट करना चाहता हूं कि केवल इसी अनुच्छेद के अधीन ही शक्तियां ली जा सकती हैं।

संशोधन संख्या 76 के विषय में मैं निवेदन करना चाहता हूं कि डॉ. अम्बेडकर के संशोधन को पढ़कर मैं समझता हूं कि उद्घोषणा या आदेश समस्त भारत में लागू हो सकता है जहां तक समय का सम्बन्ध है, यदि आप अनुच्छेद को ऐसे

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

ही रहने देते हैं और संशोधन संख्या 76 को नहीं स्वीकार करते हैं, तो इसका अर्थ यह होगा कि प्रत्येक आदेश भारत भर में या भारत के भाग में अपनी पूरी अवधि तक लागू रहेगा। यदि आप इन शब्दों को जोड़ देते हैं, तो यह संभव है कि कुछ भागों में वह आदेश थोड़े समय तक लागू रहे और शेष भारत में पूरे समय तक लागू रहे। यदि आप इसको नहीं जोड़ेंगे तो डॉ. अम्बेडकर जो चाहते हैं, वह उद्देश्य पूरा नहीं होगा।

संशोधन 77 और 78 के विषय में मैं सदन का अधिक समय लेना नहीं चाहता, क्योंकि वास्तव में ये दोनों संशोधन मूल खंड में से लिये गये हैं, जो हमने आपात की उद्घोषणा के विषय में पारित कर दिये हैं। यदि आप कृपया अनुच्छेद 275 को देखें तो आपको पता लगेगा कि ये दोनों वहां पहले ही हैं। मैं चाहता हूं कि अनुच्छेद 275 में आपात की उद्घोषणा के सम्बन्ध में ये जो दो रक्षण कवच रखे गये हैं, इन्हें इस आदेश के सम्बन्ध में भी रखा जाये। आखिर आपात की उद्घोषणा का प्रथम और सबसे बड़ा प्रभाव नागरिकों पर यही होता है कि उनके मूलाधिकार समाप्त हो जाते हैं। उन पर अत्यन्त महान प्रभाव पड़ता है। जब मैं यह देखता हूं कि आपात रबड़ के समान लचकीला हो सकता है, तो मेरी कठिनाई और भी बढ़ जाती है। जब तक संसद उस आदेश विशेष का अनुसमर्थन न कर दे, जिससे कि मूलाधिकारों की प्रत्याभूति समाप्त की गई थी, तब तक हम इस देश में सुरक्षित नहीं होंगे और किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता सुरक्षित नहीं रहेगी, जब तक कि यह उपबन्ध अधिनियमित न कर दिया जाये।

यदि आप अनुच्छेद 279 और 280 के सम्बन्ध में विद्यमान स्थिति को देखें, तो आप वास्तव में देखेंगे कि अनुच्छेद 280 का यह उपबन्ध ऐसा आवश्यक नहीं है, जितना कि वह दिखाई देता है। मेरा एक यह भी संशोधन है कि अनुच्छेद 280 के स्थान पर हम अनुच्छेद 279-क रख सकते हैं। मैं चाहता हूं कि सदन भी मेरे समान इस निष्कर्ष पर पहुंच जाये कि अनुच्छेद 280 इतना आवश्यक नहीं है जितना कि वह दिखाई देता है। जहां तक मूलाधिकारों का सम्बन्ध है, अनुच्छेद 13 ही मुख्य अनुच्छेद है। आप यदि अनुच्छेद 13 को हटा दें, तो मूलाधिकारों में कुछ नहीं बचता, जिस पर कोई व्यक्ति फूले या चिंतित हो। अनुच्छेद 13 जब अनुच्छेद 279 द्वारा समाप्त हो जाता है, तो कोई मूलाधिकारों की चिन्ता किसलिये करेगा? प्रजा की वैयक्तिक स्वतंत्रता तथा उसके अधिकारों के रक्षण के विषय में तो अनुच्छेद 15 है ही। सदन मुझे क्षमा करेगा, यदि मैं इस उपबन्ध पर थोड़ा विषयान्तर कर दूं।

अब श्रीमान, आज हमारे मूलाधिकारों में अनुच्छेद 15 हमारे संविधान पर महानतम धब्बा है। हमने अनुच्छेद 13 में जो कुछ दिया है, वह अनुच्छेद 15 द्वारा छीन लिया गया है। यदि अनुच्छेद 13 के अन्तर्गत दी गई शक्तियों के दुरुपयोग के लिये 'restriction' शब्द के पहले 'reasonable' शब्द का प्रयोग किया गया है तो वे सब संरक्षण अनुच्छेद 15 द्वारा समाप्त हो गये हैं, क्योंकि प्रक्रिया के विषय में हमने विधान-मंडल की शक्तियों पर कोई भी निर्बन्धन नहीं रखे हैं। अनुच्छेद 15 के अधीन विधान-मंडल को पूरी स्वतंत्रता है कि वह जो चाहे विधि पारित कर सकता है। वह आज के सारे रक्षण-कवच समाप्त कर सकता है। अनुच्छेद

15 के अधीन किसी विधान-मंडल को यह अधिनियम बनाने का अधिकार है कि किसी अभियुक्त की ओर से वकील खड़ा नहीं किया जा सकता। आज अनुच्छेद 15 के अधीन किसी विधान-मंडल को यह अधिनियम बनाने की क्षमता है कि वास्तव में वह बन्दीकरण सम्बन्धी, जामिन सम्बन्धी, सफाई और अपील सम्बन्धी उपबन्धों आदि का निराकरण कर सके। अनुच्छेद 15 के अधीन विशेष न्यायालय बनाये जा सकते हैं, जिनकी विशेष शक्तियां और प्रक्रिया हो और जनता की स्वतंत्रता को शून्य के समान बनाया जा सकता है। विद्यमान स्थिति यह है। जब तक आप अनुच्छेद को ठीक नहीं करते, तब तक आपके पास ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसे अनुच्छेद 280 द्वारा छीना जा सके। यदि आप अनुच्छेद 13 के अधीन सब शक्तियों ले लेते हैं, तो क्या बचता है जिसके छिनने पर किसी को दुख हो? यदि आप कृपया मूलाधिकारों को देखें तो आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि ऐसा कोई भी मूलाधिकार नहीं है, जिसे संभवत: यह अनुच्छेद 280 बनाकर छीना जा सके। सर्वप्रथम, यदि आप इन अनुच्छेदों को एक एक करके देखेंगे, तो आप इस निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि अनुच्छेद 280 इनमें से बहुतों को नहीं छूता। अनुच्छेद 9 को लीजिये, मैं नहीं समझता कि कोई व्यक्ति यह विवाद करेगा कि अनुच्छेद 280 कुओं, सड़कों, भोजनालयों आदि के प्रयोग सम्बन्धी किसी अधिकार को छूता है। इसी प्रकार अनुच्छेद 10 है, जो नियोजन के विषय में है, और अनुच्छेद 11 अस्पृश्यता के विषय में है और अनुच्छेद 12 जो खिताओं के विषय में है, और अनुच्छेद 13 का तो प्रभाव पहले ही मिटा दिया गया है। अनुच्छेद 14 के विषय में समझता हूं कि कुछ और भी बुराई की जा सकती है, यदि अनुच्छेद 280 बना दिया जाये। जो व्यक्ति दो मास पूर्व कोई अपराध कर चुका हो, उस पर बाद में बनाये गये कानून द्वारा मुकदमा चलाकर उसे अधिक दंड दिया जा सकता है। इसी प्रकार एक ही अपराध के लिये दो बार दंड दिया जा सकता है और तात्कालिक उपचार के लिये उच्चतम न्यायालय को प्रचालित करने का अधिकार छीना जा सकता है। अनुच्छेद 15 के विषय में मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूं। यदि अनुच्छेद 15 विद्यमान रूप में रहता है तो मैं भविष्यवाणी कर सकता हूं कि जब यह सब संविधान बन चुकेगा और विवाद समाप्त हो चुकेगा और डॉ. अम्बेडकर अपने बंगले में बैठेंगे तो उस दिन के लिये पश्चाताप करेंगे, जिस दिन उन्होंने अनुच्छेद 15 को बिना रक्षण-कवचों के पारित किया था। मैं उनसे और सदन से अपील करता हूं कि यदि वे वास्तव में देश के लोगों का भला चाहते हैं, तो उन्हें अनुच्छेद 15 को संशोधित कर देना चाहिये। यदि अनुच्छेद 15 का संशोधन नहीं किया जाता है, तो इस संविधान और मूलाधिकारों को रखने से कोई लाभ नहीं है। अत: मेरा निवेदन है कि जहां तक अनुच्छेद 15 का सम्बन्ध है, विधि में यह उपबन्ध है ही कि प्रक्रिया के विषय में संसद कोई विधि बना सकती है और इसलिये प्रक्रिया के विषय में कोई मूलाधिकार है ही नहीं। अतएव कोई और मुख्य मूलाधिकार नहीं है, जिस पर इस अनुच्छेद का प्रभाव पड़ता है।

अनुच्छेद 16 के विषय में जो व्यापार स्वातंत्र्य के सम्बन्ध में है, संसद को विधियां बनाने की शक्ति पहले ही प्राप्त है। अनुच्छेद 17 मानव-पण्य के वर्जन के विषय में है, और अनुच्छेद 18 बच्चों के नियोजन के विषय में है। मैं नहीं समझता कि कोई सरकार अनुच्छेद 17 के अधीन एक ही वर्ग से अनिवार्य कार्य लेना चाहेगी। इस अनुच्छेद द्वारा राज्य को शक्ति दी गई कि वह बिना विभेद किये

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

अनिवार्य कार्य ले सकता है। इस प्रकार यह तो शक्ति प्रदान करने वाला खंड है, शक्ति छीनने वाला नहीं। यदि अनुच्छेद 280 को पारित नहीं किया जाता है, तो कोई और मूलाधिकार पर प्रभाव नहीं पड़ता, अनुच्छेद 19, 20, 21, 22, 23 धार्मिक और सांस्कृतिक अधिकारों के विषय में हैं और अनुच्छेद 24 प्रतिकर के विषय में है।

अतएव मेरा विनम्र निवेदन है कि यदि मेरा निर्वचन ठीक है, तो अनुच्छेद 280 से केवल उच्चतम न्यायालय को प्रचालित करने का लोगों का अधिकार छिनता है। अधिकार नहीं छिनते; विधि समाप्त नहीं होती; विधियां पूर्ववत् ही रहेंगी। केवल मैं समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय को प्रचालित नहीं कर सकता। अनुच्छेद 13 के अतिरिक्त और कोई विधियां समाप्त नहीं होगी। यदि राष्ट्रपति इस अनुच्छेद 280 के अधीन शक्ति ले लेता है, तो विधियां वैसी ही रहेगी जैसी हैं; केवल समुचित कार्यवाहियों द्वारा तात्कालिक उपचार ही समाप्त हो जायेगा। अतएव मेरा निवेदन है कि जब तक आप अनुच्छेद 15 को नहीं बदलते, मुझे कोई चिन्ता नहीं है कि आप अनुच्छेद 280 को अधिनियमित करें या न करें। यदि अनुच्छेद 15 को संशोधित कर दिया जाये या अन्य अनुच्छेद बनाकर अधिक रक्षण-कवच रख दिये जायें, जैसा कि मेरे विचार में संविधान में होना चाहिये, तो अनुच्छेद 280 सार्थक हो जायेगा। तब अनुच्छेद 280 आवश्यक होगा, क्योंकि उसका यह अर्थ होगा कि यदि आपात होगा तो संशोधित अनुच्छेद 15 में प्रदत्त महत्वपूर्ण अधिकार ले लिये जायेंगे, और हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि कार्यपालिका को ऐसी शक्ति न दी जाये कि वह नागरिकों के सब प्रिय तथा महत्वपूर्ण अधिकारों को ले सके। जैसा कि मैं कह चुका हूं, यह आपात गंभीर भी हो सकता है और नहीं भीं। मान लीजिये, कश्मीर में या देश के किसी सीमावर्ती भाग में युद्ध हो, तो मैं नहीं समझ सकता कि त्रावनकोर और मैसूर में क्या होगा और वहां के लोगों के अधिकारों को क्यों छीना जाये। यह तो उस आपात विशेष पर निर्भर होगा। घबराने वाला मंत्रिमण्डल बिना उपयुक्त कारण के ही सब अधिकारों को छीन सकता है।

अत: मेरा नम्र निवेदन है कि हमारा अंतिम सहारा संसद है, इसलिये ये सब शक्तियां संसद को दी जानी चाहिये और इस मामले में उसकी ही बात अन्तिम होनी चाहिये और ज्योंही कोई अध्यादेश पारित किया जाये, वह संसद के निषेधाधिकार के अधीन होना चाहिये और संसद एक मास में ही कह सके कि वह उसे स्वीकार करती है या नहीं। यदि कोई ऐसा प्रस्ताव हो कि वह आदेश स्वीकृत नहीं है, तो उसे रद्द कर देना चाहिये। अतएव यदि आप जनता से अधिकारों का संरक्षण करना चाहते हैं तो आपको यह अनुच्छेद 280 उस रूप में पारित नहीं करना चाहिये जिस रूप में डॉ. अम्बेडकर अपने संशोधन द्वारा इसे पारित करवाना चाहते हैं।

***श्री बी.एन. मुनावल्ली:** (बम्बई राज्य): उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (3) में अन्त के पूर्ण विराम के

स्थान पर अर्ध विराम रख दिया जाये और तत्पश्चात् 'when it meets for the first time, after such an Order' ये शब्द जोड़ दिये जायें।"

श्रीमान, अनुच्छेद 280 ऐसा अनुच्छेद है जो राष्ट्रपति को कठोर शक्तियां प्रदान करता है। यदि हम अन्य राष्ट्रों के अन्य संविधानों को देखेंगे तो हमें पता लगेगा कि किसी राष्ट्रपति को ऐसी शक्तियां प्राप्त नहीं हैं। फ्रांसीसी संविधान में राष्ट्रपति मुकुटहीन राजा का रूप ही होता है। उसे तो केवल निषेधाधिकार प्राप्त है जिसका प्रयोग वह करता ही नहीं। गत पचास वर्षों में इस शक्ति को प्रयोग करने का कोई अवसर ही नहीं आया। इसी प्रकार स्विस संघ में राष्ट्रपति को ऐसी शक्तियां प्राप्त नहीं हैं; किन्तु आश्चर्य है कि हमारे संविधान में राष्ट्रपति मुकुटहीन राजा होने के स्थान पर मुकुट तथा राजदंड सहित राजा है। हां, उसे आपात के समय ही ये शक्तियां प्राप्त होंगी, किन्तु इस संविधान के अधीन प्रत्येक नागरिक को जो मूलाधिकार प्राप्त हैं, वे इस अनुच्छेद के अधीन राष्ट्रपति के आदेश द्वारा छीने जा सकते हैं। वह विधि का भी आश्रय नहीं लेता; पर इसमें भी एक बात है, अर्थात् खंड (3) है जिसमें लिखा है कि राष्ट्रपति द्वारा पारित आदेश को यथासंभव शीघ्र संसद के समक्ष रखा जाता है। इस खंड पर मेरा संशोधन यह है कि राष्ट्रपति द्वारा आदेश पारित करने के पश्चात् ज्यों ही संसद प्रथम बार समवेत हो, त्योंही उसके समक्ष वह पेश किया जाये और उस मामले को स्थगित न किया जाये। मेरे मित्र पंडित भार्गव ने कुछ संशोधन पेश किये हैं और वे बिल्कुल नियमित तथा उचित हैं, क्योंकि विद्यमान रूप में इस अनुच्छेद से नागरिकों को सब मूल अधिकारों से वंचित कर दिया जायेगा और यदि उनके संशोधन स्वीकार कर लिये जायेंगे तो उन्हें कुछ सुविधायें मिल जायेंगी। अतः मैं पंडित भार्गव के संशोधनों का समर्थन करता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:—

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280 के खंड (1) में 'भाग 3' इस शब्द और अंक के स्थान पर 'अनुच्छेद 13 और 16' ये शब्द और अंक रख दिये जायें।"

श्रीमान, यह प्रस्थापित नया अनुच्छेद 280 भी उतना ही कठोर है। यह अन्य कठोर खंडों के समान ही है जो इससे सम्बद्ध हैं। नये रूप में अनुच्छेद 280 का क्या प्रभाव है? यह स्मरण रखना चाहिये कि पहले एक अवसर पर डॉ. अम्बेडकर ने इस अनुच्छेद को कुछ नरम रूप में पेश किया था। उस पर सदन में गम्भीर आपत्तियां की गई थीं। डॉ. अम्बेडकर चाहते थे कि इस पर विचार स्थगित कर दिया जाये और फिर उन्होंने ऐसी चीज पेश की है जो अधिक कठोर है, अधिक आपित्तजनक है और इसलिये जो आपत्तियां उठाई गई थीं उन पर विचार ही नहीं किया गया है, वरन् यह अनुच्छेद अधिक आपत्तिजनक रूप में सदन के समक्ष पुनः पेश किया गया है। विद्यमान रूप में इसका प्रहार लम्बित मामलों पर भी होता है। अच्छेद 280 का क्या उद्देश्य है? यह है कि आपात के समय राष्ट्रपति आदेश द्वारा किसी व्यक्ति के इस अधिकार को समाप्त कर सकता है कि वह संविधान के भाग 3 में उल्लिखित अपने अधिकारों को पूरा करवाने के लिये उच्चतम न्यायालय में या किसी अन्य न्यायालय में जो इस विषय में संसद द्वारा प्राधिकृत हो, जा सकता है। संविधान के भाग 3 में कौन से अधिकारों का उल्लेख है?

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

वे तथाकथित मूल अधिकार हैं। यह कहा जाता है कि वे अधिकार रहेंगे तो, पर यदि उनका उल्लंघन हो तो कोई उपचारार्थ न्यायालय में नहीं जा सकता। पंडित भार्गव ने एक भेद किया है जो बिल्कुल लागू नहीं होता। वे कहते हैं कि अधिकार समाप्त नहीं होंगे, पर उनके पूरा करवाने के लिये न्यायालय जाने की मनाही होगी। अधिकार तो रहेंगे; उनके अस्तित्व से इन्कार नहीं है; पर लोगों को केवल न्यायालय में नहीं जाने दिया जायेगा। यह गलत बात है। किसी को कोई अधिकार देने से कोई लाभ नहीं है, यदि उसे उस अधिकार का उल्लंघन होने पर न्यायालय नहीं जाने दिया जाता। यदि आप कहते हैं–"आपको हम यह सम्पत्ति पूरी तरह दे रहे हैं, पर यदि मैं इसे छीन लूं तो आप न्यायालय में नहीं जा सकते"। यह तो अधिकार को न देने के बराबर ही है। मेरा निवेदन है कि इन दोनों का यह अर्थ है कि अधिकार भी निलम्बित हो जाते हैं। वे कौन से अधिकार हैं जो निलम्बित हो जाते हैं? वे संविधान में वर्णित-मूलाधिकार है। किन्तु वे ऐसे अधिकार हैं जिन पर आपात के कारण जरा भी प्रभाव नहीं पड़ना चाहिये। राष्ट्रपति को आपात में कार्यवाही करने की शक्ति तो देनी ही चाहिये। सदन वह शक्ति देता। अब यह प्रश्न है कि व्यर्थ शक्ति, मूलाधिकारों में हस्तक्षेप करने की अनावश्यक शक्ति नहीं दी जानी चाहिये। अब जो शक्ति मांगी जा रही है वह बिल्कुल अनावश्यक है और आपात का हल यह नहीं कि लोगों को वे अधिकार न दिये जायें जो कि मूलभूत हैं। अब संविधान में कौन से मूलाधिकार दिये गये हैं, जिनको न्यायालय द्वारा पूरा करवाने का वर्जन है। मैं इन अधिकारों को संक्षेप में बताऊंगा। वे अनुच्छेद 9 से 23-क तक में दिये हुए हैं।

अनुच्छेद 9 (1) में लिखा है कि किसी नागरिक के विरुद्ध धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान अथवा इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं किया जायेगा।

क्या इस अनुच्छेद का यह अर्थ है कि विभेद के विरुद्ध रक्षण का यह मूल अधिकार आपात की उद्घोषणा के समय निलम्बित रहेगा? क्या कोई माननीय सदस्य ऐसी स्थिति की कल्पना कर सकता है, जबकि इस विषय के अधिकारों को समाप्त करना संभव होगा कि धर्म, लिंग आदि के आधार पर कोई विभेद नहीं होगा? क्या इसका यह अर्थ है कि आपात में राज्य धर्म या मूलवंश या जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर विभेद कर सकता है? अनुच्छेद 7 के अधीन 'राज्य' शब्द के अन्तर्गत भारत की सरकार और संसद तथा राज्यों की सरकारें और "स्थानीय तथा अन्य निकाय" भी हैं। मेरे विचार में इन अधिकारों के दमन का स्पष्ट अर्थ यह है कि इससे सरकार या जिला मंडल अथवा नगरपालिका अथवा संघ-मंडल इन आधारों पर किसी व्यक्ति के विरुद्ध विभेद कर सकेंगे। मेरे विचार में इससे अधिक बेहूदी कोई बात नहीं है।

तत्पश्चात् हम अनुच्छेद 9 के खंड (1-क) पर आते हैं। उसमें यह लिखा है कि धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग आदि आदि के आधार पर दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों में प्रवेश के और कुओं, तालाबों, स्नान घाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम स्थानों के उपयोग के लिये निर्योग्यता नहीं होनी चाहिये। क्या मैं पूछ सकता हूं कि क्या आपात में लोगों के किसी वर्ग की दुकानों, अथवा

सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों में नहीं जाने दिया जायेगा; कुओं, तालाबों आदि का प्रयोग नहीं करने दिया जायेगा? मेरा निवेदन है कि वे अधिकार आपात में भी निलम्बित नहीं रह सकते।

तत्पश्चात् हम अनुच्छेद 10 पर आते हैं जिसमें लिखा है कि नियोजनों अथवा नियुक्तियों के मामले में अवसर की समता होगी। यदि आप इन अधिकारों को आपात में निलम्बित कर दें तो इसका यह अर्थ होगा कि आपात में अवसर की समता नहीं होगी। क्या मैं पूछ सकता हूं कि इस निलम्बन से क्या लाभ है?

फिर हम अनुच्छेद 11 पर आते हैं, जो अत्यन्त महत्वपूर्ण अधिकार है। अनुच्छेद 11 द्वारा अस्पृश्यता का अन्त किया गया है। यदि कोई अस्पृश्यता पर आचरण करता है, यदि अस्पृश्यता के आधार पर कोई विभेद होता है, तो वह दंडनीय बना दिया गया है। क्या आप राष्ट्रपति से लेकर क्षुद्रतम ग्रामसंघ मंडल को वह अधिकार देना चाहते हैं कि वह स्पृश्यता पुनः आरम्भ कर दे? मेरे विचार में इससे कोई आपात नहीं मिटेगा, वरन् बढ़ जायेगा।

फिर अनुच्छेद 12 में खिताबों को प्रदान करने का वर्जन है, बल्कि इसमें लिखा है कि खिताब राज्य द्वारा मान्य नहीं होंगे। क्या इसके निलम्बन का यह अर्थ होगा कि हमारी सरकार से यह विदेशी सरकारों से खिताब बरसने लगेंगे और राज्य उन्हें मान्यता देगा? मैं समझ नहीं पाता कि इससे आपात का समाधान कैसे होगा।

तत्पश्चात् हम अनुच्छेद 13 पर आते हैं, जिसमें वाक्-स्वातन्त्र्य, शान्तिपूर्वक और निरायुध सम्मेलन, संस्था बनाने और एक स्थान से दूसरे स्थान को अवाध रूप से जाने आदि की प्रत्याभूति है। किन्तु इनमें में भी शर्तें हैं कि भाषण देने में हमें अपमान-लेख, अपमान-वचन या मानहानि नहीं करनी चाहिये; कि शिष्टाचार या सदाचार का उल्लंघन नहीं होना चाहिये, कि उसके भाषण-स्वातन्त्र्य में राज्य की सुरक्षा पर प्रभाव डालने या राज्य को उलटने का प्रयत्न नहीं होना चाहिये। इस वाक्-स्वातन्त्र्य पर इतनी शर्तें लगा दी गई हैं कि वह आपात के समय भी हानिकर नहीं होगा। फिर वे ही शर्तें सम्मेलन पर लागू हैं। लोकव्यवस्था के विरुद्ध कोई बात जैसे कि विधि-विरुद्ध सम्मेलन तथा अन्य ऐसी ही चीजों के लिये संरक्षण रखे गये हैं। इसलिये मेरे विचार में, श्रीमान, शांतिपूर्वक सम्मेलन के अधिकार का काफी संरक्षण कर दिया गया है और ऐसी शर्तें लगा दी गई हैं जिनसे वह हानिहीन हो जाये। और फिर संस्था बनाने और अन्य बातों के अधिकार पर भी ऐसी ही शर्तें रखी गई हैं। वे अधिकार लोगों को इस प्रकार दिये गये हैं कि वे समाज की सुरक्षा या लोक-सदाचार या लोकशांति को हानि पहुंचाने के लिये प्रयुक्त नहीं हो सके।

फिर अनुच्छेद 14 (1) में लिखा है कि विधि की समुचित प्रक्रिया के बिना कोई व्यक्ति सिद्ध-दोष नहीं ठहराया जायेगा। यदि आप इस अधिकार को निलम्बित कर देते हैं, तो इसका यह अर्थ होगा कि बिना किसी विधि के सिद्ध-दोष हो सकता है, आप सरकार के विरुद्ध बोलने वाले किसी व्यक्ति को पकड़ सकते हैं, या सरकार के विरुद्ध लेख लिखने वाले किसी पत्र को पकड़ सकते हैं, और विधि के प्राधिकार के बिना ही उन्हें कारागार में भेज सकते हैं। अनुच्छेद 14 (2) में हमने यह भी लिखा है कि एक ही अपराध के लिय दो बार अभियोजित

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

या दंडित न किया जायेगा। यदि आप इस अधिकार को निलम्बित कर देंगे तो इससे यह प्राधिकार मिल जायेगा कि किसी को एक ही अपराध के लिये दो बार दंडित किया जा सकेगा तथा कानून के प्राधिकार के बिना भी दंडित किया जा सकेगा। और इस अनुच्छेद के अधीन कोई भी अभियुक्त अपने विरुद्ध साक्षी देने के लिये बाध्य न किया जायेगा। यदि यह अधिकार निलम्बित कर दिया जाये तो कोई दंड-न्यायालय किसी अभियुक्त को अपने ही विरुद्ध साक्षी होने के लिये बाध्य कर सकेगा।

अनुच्छेद 16 में व्यापार तथा वाणिज्य की चर्चा है कि व्यापार और वाणिज्य स्वतंत्र होना चाहिये।

श्रीमान, सामान्यत: ये ही कुछ महत्वपूर्ण मूल अधिकार हैं, जिन्हें संविधान में स्पष्ट शब्दों मैं प्रत्याभूत किया गया है। अन्य भी हैं, पर उनकी चर्चा करना आवश्यक नहीं है। क्या में पूछ सकता हूं कि इन अधिकारों को निलंबित करने से क्या अभिप्राय सिद्ध होगा? अधिकांश मामलों में इन अधिकारों के निलम्बन से, जैसा कि मैं बता चुका हूं, बेहूदगियां हो जायेंगी और कुछ मामलों में गम्भीर अन्याय हो जायेगा, और किसी प्रकार राज्य को आपात में से निकलने में सहायता नहीं मिलेगी। इन परिस्थितियों में, मेरा निवेदन है कि इन अधिकारों का निलम्बन केवल अनावश्यक ही नहीं है, वरन् कठिनाइयों और अन्याय का कारण बन जायेगा और कई मामलों में तो अत्यन्त बेहूदगी होगी। किन्तु मेरे संशोधन में अनुच्छेद 13 और 16 के विषय में कुछ अपवाद रखा गया है। अनुच्छेद 13 वाक्-स्वातंत्र्य, सम्मेलन-स्वातंत्र्य आदि के सम्बन्ध में है। हो सकता है कि आपात में इन अधिकारों को राज्य के ही हित में कम करना पड़ जाये। इसी प्रकार अनुच्छेद में प्रत्याभूत व्यापार-स्वातंत्र्य को सार्वजनिक कारणों से कम करना पड़े। आपात में उपभोज्य माल कुछ लोगों के पास इकट्ठा हो जाये और वे चोर बाजारी के प्रयोजन के लिये उनका उपयोग करें। अत: आपात में राज्य के लिये इन अधिकारों में से हस्तक्षेप करना आवश्यक हो सकता है। अत: मैंने अपने संशोधन में यह उपबन्ध रखा है कि अनुच्छेद 13 और 16 में प्रत्याभूत अधिकारों को आपात में निलम्बित किया जा सकता है।

मेरे संशोधन के साथ अनुच्छेद 280 में लिखा है कि आपात में राष्ट्रपति आदेश दे सकता है कि किसी व्यक्ति को अनुच्छेद 13 तथा 16 के अधीन के अधिकारों में हस्तक्षेप होने पर न्यायालय को प्रचालित करने का अधिकार नहीं होगा। मैंने निलम्बन के अधिकार को इस हद तक स्वीकार कर लिया है, यद्यपि मैं समझ नहीं सकता कि आपात में भी इनको निलम्बित करना किस हद तक युक्तियुक्त या उपयोगी होगा। कुछ भी हो, मैं इन अधिकारों में हस्तक्षेप करने का अधिकार राष्ट्रपति को देने के लिए तैयार हूं।

श्रीमान, जैसा कि मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूं, इन महत्वपूर्ण और मूल्यवान अधिकारों को निलम्बित करने के लिए आपात कोई आधार नहीं है। मूल अधिकार मूल ही नहीं रहेंगे, यदि वे साधारण और अनावश्यक आधारों पर समाप्त किये जा सकते हैं। इन अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं होना चाहिये, जबकि ऐसे हस्तक्षेप से राज्य को जरा भी लाभ न हो। दोनों महान विश्व युद्धों में भी—जो मानवता के लिये महानतम आपात थे—न्यायालयों को बंद नहीं किया गया। वास्तव में भारतीय तथा

अंग्रेजी न्यायालयों ने अपने द्वार खुले रखे। किसी ने उनकी शक्तियों को कम करने का विचार नहीं किया। ये अधिकार तो न्याय होने चाहियें। अन्यथा यह कहना असंभव है कि अधिकार हैं। अधिकार के उल्लंघन पर न्यायालय में जाने के अधिकार से ही डर कर राज्याधिकारी मनमानी नहीं करेंगे। इन अनुच्छेदों में राष्ट्रपति के पवित्र नाम का प्रयोग किया गया है—मेरा निवेदन है कि उसका दुरुपयोग किया गया है। जैसा कि मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूं, राष्ट्रपति स्वयं कुछ कार्यवाही नहीं करेगा। उससे व्यक्तिगत स्वविवेक से कार्य करने की आशा नहीं की जाती। उसे सदा मत्रिमंडल की मंत्रणा पर कार्य करना होगा और यह कल्पना की जा सकती है कि कोई मंत्रि-मंडल किसी सचिव या उप-सचिव के कहने पर ऐसा कदम उठा सकता है और ऐसे मूल्यवान अधिकार, जो कि स्वतंत्रता का निचोड़ है, राष्ट्रपति के पवित्र नाम से निम्नलिखित हो जायेंगे।

यह जो थोड़ा सा उपबन्ध रखा गया है कि उन आदेशों को विधान-मंडल की अगली बैठक में रखा जाना चाहिये, वह तो साधारण सा संतोष है क्योंकि राष्ट्रपति द्वारा पारित आदेश पर सदन में कोई जवाब नहीं मांग सकता, आलोचना नहीं कर सकता और वाद-विवाद भी नहीं कर सकता। अतः उन का सदन के समक्ष केवल रखा जाना, जबकि उन पर वाद-विवाद का अवसर न हो, उन लोगों के लिये कोई संतोष की बात नहीं है, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अन्य वस्तुओं से अधिक मूल्यवान समझते हैं।

मेरे विचार में इन शक्तियों को यथासंभव अधिकतम घटाना चाहिये, यद्यपि सब मानेंगे कि राष्ट्रपति को कुछ शक्तियां मिलनी चाहिये, जो कि आपात में आवश्यक हों। किन्तु राष्ट्रपति के लिये जो शक्तियां मांगी गई हैं, उनसे लोगों की स्वतंत्रता का दमन होगा। युद्धकाल में अंग्रेज़ी न्यायालय खुले रहे थे और भारतीय न्यायालय भी खुले रहे थे और महानतम विधिवेत्ता—लार्ड एटकिन के समक्ष जब यह युक्ति पेश की गई कि युद्ध में, न्याय का ऐसा रूपभेद होना चाहिये और वैयक्तिक अधिकार ऐसे कम कर देने चाहियें कि प्रयत्न में सहायता मिले, तो उन्होंने एक सुप्रसिद्ध घोषणा की थी। उन्होंने कहा था: "युद्ध हो या न हो, न्याय तो होगा ही। बादशाह महोदय का न्याय युद्ध के कारण कम नहीं किया जा सकता और उस पर युद्ध का जरा भी प्रभाव नहीं पड़ सकता"। युद्ध सबसे बड़ा आपात है, जिसकी कल्पना की जा सकती है, फिर भी वैयक्तिक अधिकारों को प्रभावी बनाने के लिये न्यायालय खुले रहे। हमने आपात की परिभाषा नहीं की है। आपात का अर्थ कुछ भी हो सकता है या शायद कुछ भी न हो। एक साधारण सी बात को आपात कहा जा सकता है और उनका प्रयोग जनता के मूलाधिकारों और स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने के लिये किया जा सकता है, चाहे आपात का उनसे कोई सम्बन्ध न हो। वे अधिकार आपात से चाहे बिल्कुल असम्बद्ध हों, फिर भी वे निलम्बित रहेंगे और न्यायालय इस विषय में बिल्कुल असहाय हो जायेंगे। मेरा निवेदन है कि ये शक्तियां नहीं दी जा सकतीं। कम से कम यह शक्ति अनुच्छेद 13 तथा 16 तक ही सीमित रहनी चाहिये, जैसा कि मैं निवेदन कर चुका हूं। मेरे विचार में यह मामला इतना गम्भीर है कि इसे पर्याप्त वाद-विवाद के बिना समाप्ति प्रस्ताव द्वारा पारित नहीं करना चाहिये।

***उपाध्यक्षः** क्या आप संख्या 17 पेश करना चाहते हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** नहीं, श्रीमान।

(संशोधन संख्या 16 पेश नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामतः** उपाध्यक्ष महोदय, इस समय सदन के समक्ष प्रस्थापित अनुच्छेद 280 का जो मसौदा है, वह उसी अनुच्छेद के पुराने मसौदे की नकल है। सदन को याद होगा कि गत अवसर पर इस अनुच्छेद पर बहस को स्थगित रखा गया था और मस्विदा समिति के बुद्धिमान व्यक्तियों ने अनुच्छेद को अधिक अच्छा रूप देने के लिये समय मांगा था। हम में से जिन लोगों ने इस विषय में दिलचस्पी ली है, उन्हें आशा थी कि यह अनुच्छेद अधिक अच्छे रूप में सदन के समक्ष आयेगा। हमारी आशायें पूरी नहीं हुई। संस्कृत में एक पुरानी किम्बदन्ती है कि किसी व्यक्ति ने कुछ सिद्ध करना चाहा पर उसे उससे बुरी चीज प्राप्त हुईः—

"विनायक प्रकुर्वाणो रचयामास वानरम्"

किसी व्यक्ति ने विनायक–गणेश–की प्रतिमा बनाना चाहा, पर वानर की प्रतिमा बन गई। मसौदा-समिति के परिश्रम का भी यही परिणाम हुआ। मसौदा समिति को आशा थी—या कम से कम हमें आशा थी—कि समिति संसद में दिये गये विविध सुझाओं पर विचार करेगी और उन्हें नये मसौदे में रख देगी। पर ऐसा नहीं हुआ। संविधान का आधार-कम से कम हम संविधान-निर्माताओं ने प्रयत्न किया है कि इसका आधार–मूल अधिकारों की 'महान सम्पुष्टि' पर रखा जाये। हमने जनतंत्र की चट्टान पर भवन बनाने का प्रयत्न किया है, पर मैं देखता हूं कि उस चट्टान से भी ऊंची 'महान निराकरण' की चट्टान है। सर्वप्रथम वह 'महान सम्पुष्टि' है, फिर वह लोकतंत्र की चट्टान है और उससे ऊपर है भाग 11 का महान निराकरण, भाग 11 का बदनाम निराकरण; और मेरे विचार में अनुच्छेद 180 इस निरंकुश प्रतिक्रिया रूपी चट्टान की आधारशिला है।

अब सदन के समक्ष जो मसौदा है, उस पर मेरे मित्रों, पंडित ठाकुरदास भार्गव, श्री मुनावाली और मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने संशोधन रखे हैं। मैंने इस प्रस्थापित अनुच्छेद पर बहुत से संशोधन भेजे हैं, जिन्हें मैं आपकी अनुमति से सदन के समक्ष अब पेश करूंगा। मेरे संशोधनों में दो अलग-अलग योजनायें हैं। एक योजना यह है कि मूल अधिकारों के निलम्बन की यह मूल शक्ति पूर्णतः संसद में निहित कर दी जाये। यह एक योजना है। यदि वह योजना सदन को स्वीकार्य न हो, तो मैं दूसरी योजना प्रस्थापित करता हूं जिससे कि राष्ट्रपति की कार्यवाही पर हर समय संसद विचार कर सकेगी और उसे स्वीकार या अस्वीकार कर सकेगी। अनुच्छेद संख्या 18 में ये दो योजनायें हैं और वे सूची में जिस व्यवस्था से रखे गये हैं, उसी के अनुसार मैं उसे सदन के समक्ष पेश करूंगा।

मैं प्रस्ताव करता हूं:

"(1) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 14 में प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (1) में 'the President may be order declare' इन शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law provide' ये शब्द रख दिये जायें।

(2) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (1) में, 'mentioned in the order' इन शब्दों के स्थान पर 'specified in the Act' ये शब्द रख दिये जायें।

(3) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (1) में, 'the rights so mentioned' इन शब्दों के स्थान पर 'any of such rights so mentioned' ये शब्द रख दिये जायें।

(4) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (1) में, खंड के अन्त के शब्दों 'in the Order' के स्थान पर 'in the Act' ये शब्द रख दिये जायें।"

(5) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (2) और (3) के स्थान पर निम्न खंड रख दिया जाये:–

'(2) An Act made under clause (1) this article may be renewed, repealed or varied by a subsequent Act of Parliament."

जैसा कि मैं कह चुका हूं, इनसे, व्यक्ति को संविधान के भाग 3 द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारों को छीन लेने की शक्ति, संसद को मिलती है, राष्ट्रपति को नहीं।

संशोधनों के दूसरे समूह में यह उपबन्ध है कि मूल अधिकारों को निलम्बित करने की शक्ति अस्थायी रूप से राट्रपति को मिल जायेगी, पर उसका तत्काल संसद अनुसमर्थन करेगी या अस्वीकार कर देगी। श्रीमान, वह संशोधन-समूह वैकल्पिक समूह है जो, आपकी अनुमति से मैं अब उसे पेश करूंगा।

श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"(1) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (1) में, 'mentioned' शब्द के स्थान पर, जहां वह पहले आया है, 'specified' शब्द रख दिया जाये।

(2) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में 'प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (1) में, 'the rights so mentioned' इन शब्दों के स्थान पर 'any of such rights so mentioned' ये शब्द रख दिये जायें।

मैं संख्या (3) को पेश नहीं कर रहा हूं।

(3) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (3) में, निम्न रख दिया जाये:—

'An order made under clause (1) of this article shall, before the expiration of fifteen days after it has been made, be laid before each House of Parliament, and shall cease to operate at the expiration of seven days from the time when it is so laid,

[श्री एच.वी. कामत]

unless it has been approved earlier by resolutions of both Houses of Parliament.'

(4) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (3) के पश्चात् निम्न नये खंड जोड़ दिये जायें:–

'(4) An order made under clause (1) of this article may be revoked by a subsequent order.

(5) An order made under clause (1) of this article may be renewed or varied by a subsequent order, subject to the provisions of clause (3) of this article.'

(5) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के अंत में, निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:–

"Notwithstanding anything contained in this article, the right to move the Supreme Court or a High Court by appropriate proceedings for a writ of *habeas corpus,* and all such proceedings pending in any court shall not be suspended except by an Act of Parliament.' "

अब, आज विचाराधीन मामला बहुत गम्भीर है और सदन से अनुरोध करता हूं कि वह इसे हल्के से न निबटाये, वरन इस पर बहुत सोच विचार कर निर्णय करे। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, मेरे विचार में तो यह अनुच्छेद एक महान निराकरण है; और मुझे विश्वास है कि जब आंधी आयेगी—ईश्वर करे ऐसा न हो,—तब इस निराकरण का बोझ इतना होगा कि मुझे भय है कि समस्त ढांचा गिर पड़ेगा। इसी कारण, श्रीमान, मैंने इन संशोधनों को पेश किया है और मैं सदन से फिर अनुरोध करता हूं कि वह इन पर सच्चे हृदय से और गम्भीरता से विचार करे।

प्राय: यह तर्क पेश किया गया है कि हमें एक प्रबल केन्द्र बनाना चाहिये। मैं प्रबल केन्द्र के बिल्कुल पक्ष में हूं—विशेषत: आपात के समय जबकि राज्य की सुरक्षा और स्थिरता बाजी पर लगी हो। पर आप केन्द्र का क्या अर्थ समझते हैं? मैं सदन को याद दिला देता हूं कि केन्द्र केवल कार्यपालिका ही नहीं है। केन्द्र संसद, अर्थात् विधान-मंडल तथा कार्यपालिका तथा न्याय पालिका से बनता है। प्रबल केन्द्र की चर्चा करते समय हम इस बात को भूल सकते हैं। हम यह समझ सकते हैं कि प्रबल केन्द्र का अर्थ प्रबल कार्यपालिका है। यह गलत विचार धारा है—ऐसी विचारधारा है जिसे यथासम्भव शीघ्र ही छोड़ देना चाहिये। अत: केन्द्र में संसद् (विधान-मंडल), कार्यपालिका तथा न्यायपालिका हैं। तीनों को प्रबल बनाइये—मैं मानता हूं।—किन्तु एक को प्रबल बनाने के लिये शेष दो तो निर्बल मत बनाइये, न्यायपालिका तथा विधान-मंडल को हानि पहुंचाकर कार्यपालिका को प्रबल मत बनाइये।

उस दिन, प्रधान मंत्री ने, एक सार्वजनिक बैठक में भाषण देते हुए, व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा राज्य की सुरक्षा के बीच प्रायः होने वाले संघर्ष की चर्चा की है। हां, मैं मानता हूं राज्य सुरक्षित रहना चाहिये जिससे को जीवन, स्वतंत्रता तथा सुख प्राप्त हो। पर व्यक्ति की स्वतंत्रता ऐसी तुच्छ वस्तु नहीं है जिसे कार्यपालिका मनमाने तौर पर समाप्त कर सके। महान अमरीकी विचारक थोरियों ने ही तो कहा था कि "ऐसे समय, जबकि नर नारियों को अन्यायपूर्वक बंदी बनाया जाता है, सच्चे नर नारी के लिये कारागार में ही स्थान है"। यदि डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये रूप में यह अनुच्छेद आज पारित कर दिया जाये तो क्या हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि इस देश में नर नारियों की स्वतंत्रता का मूल्य कुछ भी होगा और उन्हें सहसा पद-दलित न कर दिया जायेगा? श्रीमान मैं सदन को भयभीत नहीं करना चाहता पर मुझे भय है कि यह अनुच्छेद पारित हो गया तो ऐसी ही स्थिति होगी। स्वतंत्रता का निरंकुश निराकरण करने में तो यह अनुच्छेद संसार के सब संविधानों से बाजी मार ले गया है। अनुच्छेद 279 में जो हम पहले ही पारित कर चुके हैं, यह उपबन्ध है कि जब तक आपात उपबन्ध लागू रहे तब तक अनुच्छेद 13 में रखी गई व्यक्तिगत स्वतंत्रता संघ में स्वतः ही निलम्बित रहेगी; और अब अनुच्छेद 280 से नागरिक को यह भी अधिकार नहीं रहता कि वह न्यायालय को जाकर शिकायत कर सके कि वैयक्तिक स्वतंत्रता का उल्लंघन किया गया है और आपात के समय वह सब मूलाधिकारों के उल्लंघन पर भी शिकायत नहीं कर सकता। वैयक्तिक स्वतंत्रता को निर्बन्धित करने का सामान्य प्राधिकार कहीं और जगह देखने में नहीं आता।

मस्विदा-समिति ने नया मस्विदा तैयार करने में समय लगाया है और उसने अनुच्छेद को दोहराने का प्रयत्न किया है। मैं देखता हूं कि इस अनुच्छेद की भाषा आपात शक्ति अधिनियम से भी खराब है जो कि इंग्लिस्तान में 1920 में पारित हुआ था: प्रस्थापित मस्विदे के खंड (3) में उस अधिनियम के एक खंड के प्रथम भाग को दोहराया गया है। पर उस खंड के द्वितीय तथा मुख्य भाग को अपनी सुविधानुसार तथा बेईमानी से हटा दिया गया है। मैं नहीं जानता कि ऐसा क्यों किया गया है। उस आपात शक्ति अधिनियम का सम्बद्ध खंड इस प्रकार है:—

> "यदि संसद का ऐसा स्थगन या अवसान हो जो पांच दिन से अधिक है, तो 5 दिन में ही संसद की बैठक की उद्घोषणा की जायेगी, और संसद तदनुसार ऐसे दिन समवेत होगी और बैठेगी जो कि उद्घोषणा में नियत हो और वैसे ही समवेत होकर कार्य करती रहेगी जैसे कि वह उस दिन स्थगित थी या अवसन्न थी।"

और आगे यह रक्षण-कवच है:—

> "अधिनियम के अंतर्गत इस प्रकार बनाया गया कोई विनियम इस प्रकार पेश होने के पश्चात् सात दिन से अधिक लागू नहीं रहेगा, जब तक कि दोनों सदन उसे लागू रखने के लिये संकल्प पारित न कर दें।"

इंग्लिस्तान के आपात शाक्ति अधिनियम का महत्वपूर्ण भाग हमारे अनुच्छेद के मसौदे में अनुपस्थित है।

[श्री एच.वी. कामत]

अब मैं वीयर संविधान पर आता हूं जिसके उपबन्ध इस खंड से बहुत मिलते हैं पर फिर भी वह इससे कुछ नरम है। वीयमर संविधान के खंड 48 में यह उपबन्ध है:—

"(2) यदि जर्मन रीच में लोक सुरक्षा और व्यवस्था गड़बड़ या जोखम में पड़ जाए तो राष्ट्रपति लोक सुरक्षा तथा व्यवस्था को पुनः स्थापित करने के लिये आवश्यक कार्यवाही कर सकता है और यदि आवश्यक हो तो, शस्त्र शक्ति से हस्तक्षेप कर सकता है। इस उद्देश्य से वह अनुच्छेद 114 (वैयक्तिक स्वतंत्रता), 115 (निवास स्थान की अखंडता), 117 (डाक, तार और दूर भाष्य संचार की गोपनीयता), 113 (वाक्-स्वतंत्रता तथा लेखन-स्वतंत्रता), 123 (शांति-पूर्वक सम्मेलन का अधिकार), 124 (संस्था की स्वतंत्रता), तथा 153 (संपत्ति अधिकारों की प्रत्याभूति) के मूलाधिकारों को, पूर्णतः अथवा अंशतः, अस्थायी रूप से निलम्बित कर सकता है।"

पर इस पर भी रक्षण-कवच हैं। अगले खंड में यह बात थी कि इस अनुच्छेद के प्राधिकार से राष्ट्रपति जो कार्यवाही करे उसकी सूचना वह तत्काल रीक्सटेग को देगा और रीक्सटेग की मांग पर वह कार्यवाही समाप्त कर दी जायेगी। जर्मन संविधान में यह रक्षण-कवच था।

अमरीकी संविधान में यह उपबन्ध है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण लेख का अधिकार निलम्बित नहीं किया जायेगा जब तक कि विद्रोह की स्थिति में लोक सुरक्षा के लिये ऐसा करना अपेक्षित न हो पर यहां भी निलम्बन का प्राधिकार कांग्रेस ही दे सकती है जिसके विनिश्चय पर उच्चतम न्यायालय विचार कर सकता है कि क्या ऐसी स्थिति उपस्थित है या नहीं जिसमें यह निलम्बन उचित हो। अमरीकी संविधान में यह बात है। इसी प्रकार इतालवी संविधान में भी ऐसे ही रक्षण-कवच हैं। किन्तु दुर्भाग्यवश हम, जो कि भारत में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने का दम भरते हैं, ऐसे रक्षण-कवचों को आवश्यक नहीं समझते। हम कार्यपालिका पर विश्वास करते हैं। ईश्वर करे हमारा विश्वास सत्य हो। परन्तु, यदि हमारी कार्यपालिका हमसे विश्वास की मांग करती है, तो वह न्यायपालिका पर विश्वास क्यों नहीं करती, वह संसद पर भरोसा क्यों नहीं करती? क्या हमारी न्यायपालिका में कोई बुद्धि, ईमानदारी और सच्चाई है ही नहीं कि कार्य पालिका उनकी परवाह नहीं करती? यह तो अत्यन्त अपमानजनक बात है। मैं नहीं समझता कि हम ऐसे आधार पर लोकतंत्रात्मक राज्य कैसे बना सकते हैं।

यह सुझाव रखा गया है कि आपात के समय राज्य की रक्षा करना आवश्यक है। हां, राज्य की अवश्य रक्षा कीजिये; पर व्यक्ति की स्वतंत्रता का अन्यायपूर्वक बलिदान करके नहीं। कुछ मामलों में और कुछ अवसरों पर स्वतंत्रता का अपहरण जीवनहानि से भी बुरा होता है। मैं तो यह दावा करता हूं कि स्वतंत्रता जीवन से भी अधिक मूल्यवान है, और अत्यन्त गम्भीर आपात से भी राज्य को यह शक्ति नहीं मिलनी चाहिये कि वह व्यक्ति की स्वतंत्रता को अनुचित रूप से छीन सकें। यह महान सिद्धांत है और यह हमारे संविधान का ध्रुवतारा होना चाहिये। बंदी-प्रत्यक्षीकरण लेख का अधिकार एक पवित्र अधिकार है जिसमें व्यक्ति की

स्वतंत्रता प्रतिष्ठित है: इससे उसे उच्चतम न्यायालय से अपील करने का अधिकार मिलता है। हमारे समक्ष का यह अनुच्छेद व्यक्ति के इस अधिकार को समाप्त करता है।

हम शांति और व्यवस्था चाहते हैं जिससे कि राज्य आपात में सुरक्षित रहे। पर इस प्रकार आपको कौन-सी शांति होगी? आप किस प्रकार की सुरक्षा या स्थिरता चाहते हैं? राज्य रक्षित रहेगा। पर हो सकता है कि आप इस प्रकार जो शांति चाहते हैं वह श्मशान की शांति हो, मरुस्थल की शांति हो। यदि मसौदा-समिति के बुद्धिमान व्यक्तियों के मस्तिष्क में ऐसी शांति है तो ऐसी शांति पूर्ण स्थिति में रहने से तो मैं मर जाना अच्छा समझता हूं।

केन्द्र को प्रबल बनाने के आवेश में, हम इसका यह गलत अर्थ लगा रहे हैं कि कार्यपालिका प्रबल हो। यदि हम शक्तिशाली कार्यपालिका चाहते हैं तो हमें शक्तिशाली विधान-मंडल तथा शक्तिशाली न्यायपालिका भी रखनी चाहिये। मैंने कहा है कि केवल कार्यपालिका से ही राज्य नहीं बनता। हमारे यहां संसद होगी और न्यायपालिका भी होगी, उन दोनों और कार्यपालिका सबसे मिलकर राज्य बनता है। मेरी बातों से किसी के कान पर जूं भी नहीं रेंगी है। मैं कई बार सोचता हूं, "अहा विवेक, तुम नृशंस पशुओं में पलायित हो, और मनुष्य ने अपने विवेक को खो दिया है"। क्या हम उस अवस्था को पहुंच चुके हैं? मुझे आशा है ऐसा नहीं है। मुझे आशा है कि भारत की भलाई के लिये, अपने साथी नर नारियों की भलाई के लिये जो कि दासता के अंधकार से अभी स्वतंत्रता के प्रकाश में आये हैं, हम उनके सुख के लिये कुछ करेंगे, और केवल एक वर्ग के एक छोटे से शक्ति-आरूढ़ गुट के हाथों को मजबूत करके ही संतुष्ट नहीं हो जायेंगे। राष्ट्रपिता की यह भावना नहीं थी। सदन को पता है कि वे विकेन्द्रीकरण चाहते थे और केन्द्र को प्रबल बनाना नहीं चाहते थे। वे विकेन्द्रित राज्य बनाना और स्वशासित अंगों को शक्ति देना चाहते थे।

हम आपात के उपबन्धों पर विचार कर रहे हैं। अत: मैं मानता हूं कि केन्द्र को कुछ शक्तियां होनी चाहियें। मेरा तो यही कहना है कि काफी रक्षण-कवच होने चाहिये, न्यायिक रक्षण-कवच और संसदीय रक्षण-कवच। इस अनुच्छेद के मस्विदे में इनमें से कोई रक्षण-कवच नहीं है। पर यह अनुच्छेद सदन के समक्ष पुन: विचार और अनुमोदन के लिये आया हुआ है। मुझे विश्वास है कि यह स्वीकृत हो ही जायगा। मैंने यूनाइटेड किंगडम के आपात शक्ति अधिनियम, 1920 में आपात शक्तियों सम्बन्धी उपबन्धों को ध्यान से पढ़ा है। उसमें लिखा है कि संसद को पांच दिन में ही आहूत किया जाना चाहिये। दूसरी बात, वह आज्ञप्ति सात दिन में ही समाप्त हो जायेगी जब तक कि संसद उसका पहले ही अनुमोदन न कर दे। उसी प्रकार मैंने अपने संशोधन संख्या 4 में यह उपबन्ध रखा है कि इस अनुच्छेद के खंड (1) के अंतर्गत निकाला गया कोई आदेश 15 दिन में ही संसद के समक्ष पेश हो जाना चाहिये—भारत इंग्लिस्तान की तुलना में बड़ा देश है अत: मैंने सात दिनों के स्थान पर पंद्रह दिन रखे हैं। यदि आप व्यक्तियों की स्वतंत्रता की रक्षा करना चाहते हैं, केवल राज्य की सुरक्षा तथा शक्ति आरूढ़ लोग की सुरक्षा ही नहीं, तो संघ दबुलाने के लिये पंद्रह दिन पर्याप्त होने चाहिए। मैंने इंग्लिस्तान के आपात शक्ति अधिनियम के समान यह भी बात रखी है कि मूल अधिकारों को निलम्बित करने का आदेश एक सप्ताह के अन्त में समाप्त

[श्री एच.वी. कामत]

हो जायेगा, यदि उसे संसद के संकल्पों द्वारा पहले ही अनुमोदित न कर दिया जाये। यह एक बुद्धिमतापूर्ण रक्षण-कवच है जिस पर मुझे आशा है सदन सच्चे दिल से विचार करेगा।

मेरा अंतिम संशोधन द्वितीय सप्ताह का संख्या 6 है—मैं शेष संशोधनों पर बोलना नहीं चाहता। मुझे वहां राष्ट्रपति को शक्ति प्रदान करने में कोई आपत्ति नहीं है यदि वह संसदीय विनियमन तथा नियंत्रण के अधीन हो। अत: मेरे अंतिम संशोधन का यह आशय है कि बन्दी प्रत्यक्षीकरण लेख के लिये समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को प्रचालित करने का अधिकार संसद के अधिनियम के अतिरिक्त किसी प्रकार निलम्बित न किया जाये।

गत विश्व युद्ध में, यहां ब्रिटिश सरकार अपने साम्राज्य को बनाये रखने के लिये गम्भीरतम दमन कर रही थी। श्री चर्चिल ने तो यहां तक कहा था "मैं इसलिये प्रधान मंत्री नहीं बना हूं कि ब्रिटिश साम्राज्य के अवसान का अधिष्ठाता बनूं" जिससे यह पता लगता है कि श्री चर्चिल को भी किसी समय यह आशंका थी कि साम्राज्य जोखम में था और शायद वह समाप्त हो जाता। यद्यपि वे जीवन-मरण संग्राम में संलग्न थे, फिर भी ब्रिटिश सरकार ने बन्दी प्रत्यक्षीकरण लेख के लिये न्यायालयों को प्रचालित करने का अधिकार निलम्बित किया था। बंबई के टालपेड का सुविख्यात वाद इस विषय पर ही है। यह मामला संघीय न्यायालय में आया था और मुख्य न्यायाधिपति मौरिस गायर ने भारत सुरक्षा अधिनियम की धारा 26 को अधिकार चेष्टा बता दिया था। उसके फलस्वरूप इस धारा को बाद में संशोधित किया गया था। यह बात यहां मेरे साथियों को याद होगी ही। अतएव में उस विषय पर अधिक नहीं बोलना चाहता। जैसाकि मैं कह रहा था ब्रिटिश सरकार ने भी इस महत्वपूर्ण अधिकार को निलम्बित नहीं किया था। पर हम, जो लोकतंत्रात्मक संविधान बना रहे हैं, इस अधिकार को भी आपात में निलम्बित करना चाहते हैं।

आखिर हमारे अधिकांश नेता हमें बता रहे हैं कि आज हम संकट में से गुजर रहे हैं। संकट से उनका आशय है एक प्रकार का आपात: हमारे यहां हैदराबाद, काश्मीर, पश्चिमी बंगाल तथा भारत के अन्य भागों में गड़बड़ हो चुकी है। किन्तु केन्द्रीय सरकार स्थिर है ओर आपात की घोषणा किये बिना भी ठीक चल रही है। कोई मूल अधिकार या बन्दी प्रत्यक्षीकरण का अधिकार निलम्बित नहीं किया गया है। यहां भी, 15 अगस्त 1947 में, जबकि पुराने भारत सरकार अधिनियम को भारत स्वतंत्रता अधिनियम के अधीन अनुकूल बनाया गया था, तब गवर्नर-जनरल तथा राज्यपालों में निहित आपात शक्तियां अनुकूलित अधिनियम में नहीं थीं। वे अनुकूलित भारत शासन-अधिनियम में नहीं थीं और अनुकूलित भारत-शासन-अधिनियम में आपात शक्तियां राज्यपालों या गवर्नर-जनरल को प्रदान नहीं की गई थीं। हम दो कठिनाई के वर्षों, संकट के वर्षों, गड़बड़ के वर्षों में से गुजर चुके हैं, यद्यपि राज्यपाल या गवर्नर जनरल में कोई शक्तियां निहित नहीं हैं और कोई आपात के उपबन्ध नहीं हैं। सरदार पटेल ने हमें कुछ मास पूर्व बताया था कि यह देश स्थिर होता जा रहा है। एक सांस में आप यह कहते हैं कि स्थिति अधिक अच्छी और अधिक स्थिर होती जा रही है और अगले सांस में आप संविधान में ऐसा खंड रखना चाहते हैं जिसका उद्देश्य आपात में सब नागरिकों को मूलाधिकारों से वंचित

करना है। डॉ. अम्बेडकर उठकर उत्तर दे सकते हैं: "ओह! यह तो संविधान में लिख दिया है; पर यह मृतक वाक्य ही रखेगा। मुझे आशा है कि हमें इसका प्रयोग करने की या उस कार्यवाही करने की अपेक्षा न होगी"। मुझे आशा है कि हम इसका कभी प्रयोग नहीं करेंगे। उन्होंने पिछली बार यह कहा था मैं मानता हूं कि डॉ. अम्बेडकर ऐसा कह सकते हैं, प्रधान मंत्री ऐसा कह सकते हैं और अन्य मंत्री ऐसा कह सकते हैं। मैं एकदम मानता हूं कि वे सब माननीय व्यक्ति हैं, वे सब बुद्धिमान तथा सच्चे व्यक्ति हैं, पर संविधान डॉ. अम्बेडकर या पंडित नेहरू या सरदार पटल के लिये नहीं होता; संविधान केवल इसी पीढ़ी के लिये नहीं है; हम तो इसे आने वाली अन्य पीढ़ियों के लिये बना रहे हैं, और केवल डॉ. अम्बेडकर या विद्यमान सरकार के लिये ही नहीं बना रहे। मुझे आशा है कि यह संविधान कई पीढ़ियों तक रहेगा। किन्तु कभी-कभी मेरे दिमाग में आशंकायें उत्पन्न होती हैं; जैसा संविधान आज बन रहा है उससे मुझे आशंका होती है कि यह संविधान शायद बहुत लम्बे समय तक न रहे। ईश्वर न करे कि मेरी आशंकायें गलत हो जायें। किन्तु मुझे कभी-कभी भय होता है कि यह समस्त संविधान शायद उतने वर्षों से अधिक न रहे सके जो उंगलियों पर गिने जा सकते हैं। मैं तो यही अनुभव करता हूं; मुझे आशा है कि मैं गलती पर हूं और मुझे आशा है कि मैं अत्यन्त निराशामय चित्र खींच रहा हूं; किन्तु, श्रीमान, मैं सदन से अनुरोध करना चाहता हूं कि यदि आप राज्य को बचाना चाहते हैं तो अवश्य बचाइये, पर व्यक्ति को उसके अधिकारों से, उसकी स्वतंत्रताओं से, उसकी मूल स्वाधीनताओं से वंचित न करें, जोकि संविधान के प्रारम्भिक ध्यान में उसके प्रत्याभूत की गई हैं। संविधान के अन्त में हम एक हाथ से वह चीज़ छीन रहे हैं। जो हमने दूसरे हाथ से दी थी। क्या हम इसी प्रकार की ही स्वतंत्रता के लिये लड़े हैं? क्या इसी प्रकार की स्वतंत्रता के लिए ही हम प्रत्यन करते रहे हैं? क्या इसी प्रकार का लोकतंत्र हम बना रहे हैं...।

***उपाध्यक्ष:** क्या माननीय सदस्य कृपया अपनी वक्तृता को समाप्त करेंगे? वे 45 मिनट से बोल रहे हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** यदि आप समझते हैं कि मैं पुनरावृत्ति कर रहा हूं, तो मैं आपके निर्णय को शिरोधार्य करूंगा, पर मैं पुनरावृत्ति नहीं कर रहा...

***उपाध्यक्ष:** मुझे यह कहते हुए खेद है कि सदस्य महोदय युक्तियों को दोहरा रहे हैं और मुझे बहुत खुशी होगी यदि वे कृपया अपनी वक्तृता को समाप्त कर दें।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं केवल दो मिनट और लूंगा, श्रीमान। श्रीमान, मैं उपाध्यक्ष महोदय के निर्णय को शिरोधार्य करता हूं और मैं समाप्त कर दूंगा। मैं बहुत कुछ और कहना चाहता था किन्तु मैं उसे अगले अवसर के लिये छोड़ता हूं। मुझे भय है कि यदि डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित रूप में यह अनुच्छेद सदन में स्वीकृत हो जायेगा, तो उससे व्यक्ति के अधिकारों और स्वतंत्रताओं को, जो संविधान के अधीन प्रत्याभूत हैं, खतरा पैदा हो जायेगा। मुझे आशंका है कि इस अकेले अध्याय द्वारा–अध्याय 11 द्वारा–हम एक निरंकुश राज्य, एक पुलिस राज्य की नींव डाल रहे हैं, ऐसे राज्य की नींव डाल रहे हैं। जो उन सब आदर्शों और सिद्धान्तों के सर्वथा विपरीत होगा जिनका हम गत कुछ युगों से समर्थन कर रहे

[श्री एच.वी. कामत]

हैं, जिस राज्य में करोड़ों निर्दोष नर नारियों के अधिकार और स्वतंत्रतायें लगातार जोखम में होंगी, जहां यदि शांति होगी तो वह श्मशान की शांति होगी, मरुस्थल की शांति होगी। मैं ईश्वर से केवल यही प्रार्थना करता हूं कि वह हमें बुद्धि दे, ऐसी विपत्ति को हटाने की बुद्धि दे, साहस और हिम्मत दे। मैं महात्मा गांधी की प्रार्थना के साथ समाप्त करता हूं कि "सबको सम्मति दे भगवान।"

***प्रो. के.टी. शाह:** (बिहार: जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:—

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 18 के भाग (6) में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के नये खंड के स्थान पर, निम्न रख दिया जाये:—

'Notwithstanding anything contained in this article, the right to move the Supreme Court, as guaranteed by article 25 of this Constitution, by appropriate proceedings, shall not be suspended, nor shall any proceedings in respect of such right pending at the date of the Proclamation of Emergency in any court be suspended:

Provided that in the event of any cause of action arising in respect of any violation of any of the Fundamental Rights declared or conferred by Part III of this Constitution, against any person or authority, Parliament may, by a special Indemnity Act passed in that behalf, indemnify any such person or authority against the consequence of any such act done *Bona fide* during the period while the Proclamation of Emergency was in force.' "

[इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के अनुच्छेद 25 द्वारा प्रत्याभूत, समुचित कार्यवाही द्वारा उच्चतम न्यायालय को प्रचालित करने का अधिकार, निलम्बित नहीं होगा, और न ऐसे अधिकार के विषय में कोई कार्यवाही, जो आपात की उद्घोषणा के दिन किसी न्यायालय में लम्बित हो, निलम्बित होगी:

परन्तु जब, किसी व्यक्ति या प्राधिकारी के विरुद्ध, इस संविधान के भाग 3 द्वारा प्रदत्त या घोषित किसी मूलाधिकार के किसी उल्लंघन के कारण कोई वाद-मूल उठ खड़ा हो, तो संसद, उस विषय में एक विशेष अधिनियम पारित करके किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को ऐसे कार्य के परिणामों से बचा सकती है जो उसने आपात के समय अच्छी नियत से किये हों।]

श्रीमान, मुझे इस विषय पर अन्य वक्ताओं के समान ही प्रबल आपत्ति है कि राष्ट्रपति को ऐसी असाधारण शक्तियां दे दी जायें कि वह उस एकाकी अधिकार को भी निलम्बित कर सके जो संविधान में स्पष्टतः प्रत्याभूत है, कि कुछ लेखों के लिये उच्चतम न्यायालय में जाकर नागरिकों के लिये घोषित या प्रदत्त अधिकारों के उल्लंघन का उपचार किया जा सकता है। यही एक अधिकार शायद अन्य किसी अधिकार से अधिक मूल्यवान है क्योंकि इसके कारण ही अन्य अधिकार क्रियात्मक, वास्तविक, ठोस तथा सचमुच में प्रयोगनीय होते हैं; क्योंकि यदि कोई व्यक्ति भाग 3 में उल्लिखित किसी मूलाधिकार के वर्जन से त्रस्त हो तो वह न्यायालय में जा सकता है जो उसे समुचित सहायता प्रदान कर सकता है।

प्रस्थापित अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति को कार्यपालिका आदेश द्वारा यह अधिकार भी निलम्बित करने का अधिकार होगा। डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में यह सुझाव है कि आदेश देने के पश्चात् वह उसे यथा सम्भव शीघ्र संसद् के समक्ष रखेगा। मुझे कहना होगा कि मुझे यह मूल मसौदे पर सुधार दिखाई नहीं देता, क्योंकि, यदि आप आदेश को निकालने के पश्चात् संसद के समक्ष रखते हैं तो या तो उसकी आलोचना मात्र हो सकती है, जो शायद व्यर्थ ही हो या जिससे कार्यपालिका और विधान-मंडल के संबंध बिगड़ जायें। यह बात मेरे समझ में आ सकती है यदि आप कहते कि आदेश निकालने से पहले संसद से परामर्श लिया जायेगा, या आप यही सुझाव देते कि संसद की बात को पूरी करने के लिये उस आदेश का रूप भेद कर दिया जायेगा।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** औचित्य प्रश्न के नाते क्या मैं जान सकती हूं कि माननीय वक्ता मूल प्रस्ताव पर बोल रहे हैं या अपना संशोधन पेश कर रहे हैं?

***प्रो. के.टी. शाहः** मैं संशोधन पेश कर चुका हूं।

***उपाध्यक्षः** उन्होंने संशोधन पेश कर दिया है।

***प्रो. के.टी. शाहः** ऐसी अवस्था में, मैं अनुच्छेद तथा अपने मित्र भी कामत द्वारा प्रस्थापित संशोधन में यह संशोधन पेश कर रहा हूं कि यह मूल अधिकार, जो कि संविधान द्वारा प्रत्याभूत एकमात्र अधिकार है, किसी भी अवस्था में निलम्बित नहीं होगा, चाहे पिछले अनुच्छेदों में कुछ भी लिखा हो। चाहे कोई आपात हो, यह अधिकार तो निलम्बित नहीं होना चाहिये जैसा कि माननीय वक्ता ने कहा है, चाहे युद्ध ही हो, फिर भी लोगों का न्याय, देश का न्याद बन्द या निलम्बित नहीं होगा।

पर मैं समझता हूं कि आपात में सरकार के अधिकारी, सैनिक तथा असैनिक, कार्यवाही करने से पूर्व शायद प्रतीक्षा न कर सकें। पर उन्हें यह सीखना है कि यदि हमें स्वतंत्र लोकतंत्रात्मक संविधान के अंतर्गत रहना है तो, जो भी विधि विरुद्ध कार्य करेगा उसे उसका फल भोगना पड़ेगा। विधि विरुद्ध कार्य के उत्तर में वह यह नहीं कह सकेगा कि उसने समझा था यह देश के हित में आवश्यक है। पर उन अधिकारियों पर जो कि समुदाय के हितार्थ नेकनीयती से कार्य करें और आपात संबंधी आदेशों के अनुसार कार्य करें, अनुचित आपत्ति न आये, इसके लिये, यदि कोई मूल अधिकार का,—मान लीजिये सम्मेलन की या अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

[प्रो. के.टी. शाह]

का उल्लंघन हो जाये तो वह उल्लंघन स्वत: ही उद्घोषणा के अंतर्गत नहीं आयेगा, किन्तु बाद में संसद क्षमता का अधिनियम पारित कर सकती है जिसमें वे सब मामले गिना दिये जायें जिनसे ऐसे मुकदमे या दावे चल सकते हों या अधिकारियों के विरुद्ध कार्यवाही हो सकती हो, और सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न विधान-मंडल होने के नाते संसद उन अधिकारों की रक्षा कर सकती है।

यह प्रक्रिया ब्रिटिश संविधान में सुविख्यात है, जिसकी नकल हम यहां हूबहू कर रहे हैं और उस संविधान में यह एक ऐसी बात है जिससे कि हम कुछ सीख सकते हैं, और राष्ट्रपति को खुली छुट्टी देने की बजाय, या आपात की उद्घोषणा के ही आधार पर कोई कार्य करवाने के बजाय, हमें यह बात रख देनी चाहिये कि, चाहे अधिकारी इस आदेश के अधीन कार्य करने में मुख्यत: अपनी जोखम पर ही कार्य करेगा, पर उचित कारण बताने पर, संसद उसे क्षमा करने की अभीष्टता पर विचार कर सकती है।

इसका यह परिणाम होगा कि लोक-सेवक या राज्याधिकारी स्वत: रुक जायेंगे किसी प्रकार शक्ति-प्रयोग करने में या अपने प्राधिकार को विस्तृत करने में वे बार-बार सोचेंगे कि कोई ऐसी कार्यवाही न की जाये जिसके लिये क्षमा अधिनियम न बन सके। या संसद ऐसा अधिनियम पारित ही न करे। यह एक बाधाकारी बात होगी, जिससे, मेरे विचार में प्रशासन भी ठीक चलेगा तथा नागरिक की स्वतंत्रता भी बनी रहेगी।

यदि आप इस बात को स्वीकार कर लें, जैसा कि मुझे आशा है कि इस अनुच्छेद के समर्थक स्वीकार करेंगे, तो इस प्रकार के उपबन्ध से, जैसे चाहे शब्द रखें, इससे सब कुछ ठीक हो जायेगा मेरे विचार में पूर्ववक्ताओं ने जो कठिनाई बताई है, कार्यपालिका प्राधिकार के अनावश्यक विस्तार के संबंध में हम जो आशंकाएं करते हैं, वे इस प्रकार मिट सकती हैं।

इस संविधान में कहीं भी ऐसा उपबन्ध, अर्थात् क्षमा अधिनियम नहीं है, जिसकी मैं यहां चर्चा कर रहा हूं। प्राधिकारी लोगों ने, जो संविधान का मस्विदा बनाने के लिये उत्तरदायी हैं उन्होंने, इस सदन में आलोचना को विनाशात्मक या अनुपयोगी बताया है। मैं यह रचनात्मक प्रस्थापना पेश करता हूं जो ब्रिटिश संसद में है और ब्रिटिश इतिहास का उसे समर्थन प्राप्त है। यह अब कसौटी है कि क्या प्रस्तावकों को नागरिक की स्वतंत्रता का पर्याप्त ध्यान है कि वे ऐसे सुझाव को मान सकें। मैं इसे उनकी सद्भावना पर छोड़ देता हूं।

(संशोधन संख्या 20, 21 तथा 22 पेश नहीं किये गये।)

***श्री बी.एम. गुप्त** (बम्बई: जनरल): मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:—

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 2 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 78 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड (3) के अन्त में जिन शब्दों को जोड़ने की प्रस्थापना है उनमें, 'एक मास' इन शब्दों के स्थान पर, जहां भी वे हों, 'दो मास' ये शब्द जोड़ दिये जायें।"

श्रीमान, यह मेरे मित्र श्री ठाकुरदास भार्गव द्वारा पेश किये गये संशोधन पर संशोधन है। मेरे तथा उनके संशोधन में यही अन्तर है कि मैं उस आदेश को संसद में रखने के लिये दो मास देना चाहता हूं जबकि उन्होंने एक ही मास रखा है। दो मास रखना अधिक ठीक है क्योंकि वह कालावधि मुख्य अनुच्छेद 275 में उल्लिखित है। निस्संदेह डॉ. अम्बेडकर ने बहुत हद तक उन भावनाओं का आदर किया है जो कि इस मामले पर पिछली बहस के समय सदन में प्रकट की गई थी। पर वे काफी दूर नहीं गये हैं और कोई निश्चित अवधि का उल्लेख नहीं किया है जिसमें कि इस अनुच्छेद के अधीन कोई आदेश संसद में पेश किया जायेगा। अनुच्छेद 275 के अधीन, आपात की मुख्य उद्घोषणा दो मास के अन्दर ही संसद द्वारा अनुमोदित कर दी जायेगी। मैं नहीं समझता कि इस मामले में भी, जो कि उस उद्घोषणा का अत्यन्त स्वाभाविक परिणाम होगा, सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न विधान-मंडल को वैसा ही प्रभावी नियंत्रण क्यों न करने दिया जाये। मूल अधिकारों के उपचार का निलम्बन बहुत ही आधारभूत मामला है और कार्यपालिका के लिये यह आवश्यक होना चाहिये कि वह थोड़ी सी निर्धारित कालावधि में, कहिये दो मासों में, उसका अनुसमर्थन करवाये। मैं नहीं समझता कि इस मामले में कोई कठिनाई होनी चाहिये। सम्भवत: वह आदेश भी उद्घोषणा करने के तुरन्त बाद ही निकाला जायेगा, या सम्भवत: वह उद्घोषणा करने के बाद और संसद में साथ ही पेश करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। यदि यह मान लिया भी जाये कि संसद का विसर्जन होने के पश्चात् ही आदेश निकालना पड़े तो क्या होगा? संसद को इसी प्रयोजन के लिये बुलाना पड़ेगा। मैं कहता हूं, इस पर कोई आपत्ति नहीं है। इस पर केवल यही आपत्ति होगी कि खर्च का प्रश्न उठेगा। मेरा निवेदन है कि महत्वपूर्ण मामलों में, खर्च का कोई महत्व नहीं है। हम लोकतंत्रात्मक शासन जान बूझकर बना रहे हैं, और इसके बाद हमें उस खर्च की चिन्ता नहीं करनी चाहिये जो उस लोकतंत्र को प्रभावी बनाने के लिये अपेक्षित हो। हां, मेरा यह अर्थ नहीं है कि व्यर्थ खर्च किया जाये। जो लोग आज शासन चलाने के लिए उत्तरदायी हैं या जो बाद में शासन चलाने के लिये उत्तरदायी होंगे उन्हें अपनी कार्य व्यवस्था ऐसी बनानी चाहिये कि सार्वजनिक कोष पर अनावश्यक खर्च न पड़े।

पर साथ ही, महत्वपूर्ण मामलों में, जहां महत्वपूर्ण सिद्धांत अंतर्ग्रस्त होते हैं, वहां खर्च का विचार बिल्कुल नहीं किया जाता। निस्संदेह यह निर्णयात्मक नहीं हो सकता। मूल अधिकारों का निलम्बन केवल अतीव महत्वपूर्ण मामला ही नहीं है वरन् एक मूल मामला और इसलिये मैं डॉ. अम्बेडकर से प्रार्थना करता हूं कि वे पंडित भार्गव के संशोधन को, मेरे द्वारा संशोधित रूप में स्वीकार कर लें।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:—

> "कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खंड 3 के अन्त में, निम्न शब्द जोड़ दिये जाये:—
>
> 'and if the House of the People, by a resolution passed by it, amends, varies or rescinds the order, the resolution shall be given effect to immediately.' "

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

यदि यह संशोधन मान लिया जाये, तो डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का खंड (3) निम्न प्रकार बन जायेगा:—

"Every order made under clause (1) of this article shall as soon as may be after it is made by laid before each House of Parliament and if the House of the People, by a resolution passed by it, amends, varies or rescinds the order, the resolution shall be given effect to immediately."

पिछले अवसर पर, इस अनुच्छेद पर बहस के वक्त, मैंने एक संशोधन रखा था कि 'President may by order' इन शब्दों के स्थान पर 'Parliament by law' ये शब्द रख दिये जायें। मैंने यह आशा की थी, मसौदा-समिति अपनी त्रुटि को मान गई थी और वे समुचित संशोधन कर देंगे। मैं देखता हूं कि पूर्ववर्ती मसौदे में एक सुधार कर दिया गया है, और संविधान के भाग 3 द्वारा प्रदत्त समस्त अधिकार स्वत: निराकृत नहीं होंगें, वरन् केवल वे ही अधिकार होंगे जिन्हें राष्ट्रपति निराकृत घोषित कर दे। मेरे विचार में यदि यह अनुच्छेद संविधान का भाग हो तो फिर भी यह उन स्वतंत्राओं का प्रतिषेध होगा जो हम मूलाधिकार में दे रहे हैं। अत: मेरे विचार में या तो वह संशोधन स्वीकृत हो जाना चाहिये जो मैंने उस दिन पेश किया था और जिसे अब श्री कामत ने इसी अनुच्छेद 280 पर पेश किया है, या कम से कम डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के खंड (3) पर मेरा यह संशोधन स्वीकृत हो जाना चाहिये। इसका कम से कम यह प्रभाव पड़ेगा कि यदि संसद की बैठक न हो रही हो और राष्ट्रपति यह समझे कि आपात में यह आवश्यक है कि उसे ऐसी शक्ति का प्रयोग करना चाहिये तो इस संशोधन से उसे यह अधिकार मिल जाता है; पर ज्यों ही संसद समवेत होगी, वह उस आदेश को सदन की मेज़ पर रखवायेगा तथा लोक सभा को उसमें परिवर्तन करने, रूप भेद करने या उसे हटा देने का हक होगा। इस पर आपत्ति नहीं होनी चाहिये। डॉक्टर अम्बेडकर यही तो चाहते हैं कि आपात में राष्ट्रपति की शक्तियां कम नहीं होनी चाहिए। मैं उन्हें कम नहीं कर रहा हूं। वास्तव में वही आपात उद्घोषणा दो मास के भीतर ही लोक सभा में पेश होगी और पुन: स्वीकृत की जायेगी। अत: संसद अन्तिम प्राधिकारी है। फिर क्या हानि है यदि मूल अधिकारों का निराकरण भी—यदि वह आपात में किया जाये तो—संसद के समवेत होते ही उसके समक्ष पेश किया जायेगा और संसद को, विशेषत: लोक सभा को, उसमें परिवर्तन करने या उसे समाप्त करने का अधिकार होना चाहिये। अन्यथा के सर्वोपरि मूलाधिकार समाप्त कर दिये जायेंगे। मैं अनुच्छेद 25 में प्रत्याभूत अधिकारों का बहुत मूल्य समझता हूं—बंदीप्रत्यक्षीकरण आदि अधिकारों का। जैसा कि मैंने पिछली बार कहा था, जब हम 1942 में जेल में थे, तब भी युद्धकाल में विदेशी सरकार ने हमें बंदीप्रत्यक्षीकरण के अधिकार से वंचित करना ठीक नहीं समझा था। अत: यदि इस अधिकार का निराकरण करने की शक्ति राष्ट्रपति को दी जाती है तो यह संविधान पर कलंक होगा और इसे इसमें समाविष्ट नहीं करने देना चाहिये।

इसलिये मेरे विचार में यदि डॉ. अम्बेडकर श्री कामत के संशोधन को स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं हैं तो उन्हें मेरे वाला संशोधन स्वीकार कर लेना चाहिये

जिससे उनकी यह बात भी पूरी हो जायेगी, कि राष्ट्रपति को आपात में इन अधिकारों को भी निलम्बित करने का अधिकार होगा, किन्तु ज्योंही संसद समवेत होगी, यह राष्ट्रपति के आदेश को रद्द कर सकेगी। यह बहुत नरम संशोधन है और यदि मसौदा-समिति उस पर विचार करेगी, तो मुझे आशा है, वे इसे स्वीकार कर लेंगे। इस अनुच्छेद के विषय में उस दिन हमारे विद्वान मित्र कुंजरू ने विरोध प्रकट किया था और उन्होंने कहा था कि यह बहुत भयानक अनुच्छेद है और इसे इस पुस्तक में स्थान नहीं मिलना चाहिये था, पर यदि इसे रखा जाता है तो इसका ऐसा रूप भेद कर देना चाहिये कि इस विषय में संसद की अन्तिम सत्ता पर संदेह न हो सके। यदि संसद इस आदेश को बदल नहीं सकती तो संसद का एक मूल अधिकार समाप्त हो जाता है। आप कह सकते हैं कि सदन को कार्य पालिका की निन्दा करने का सदा अधिकार है, पर कोई भी राष्ट्रपति के आदेश में परिवर्तन करने मात्र के लिये यह उग्र उपाय नहीं अपनायेगा। अतः मेरे विचार में मेरे संशोधन का किसी सदस्य को जो कि प्रस्ताव द्वारा राष्ट्रपति के आदेश में सुधार करना चाहे ऐसा करने का अधिकार मिल जायेगा। यह बहुत नरम संशोधन है और मुझे आशा है कि डॉक्टर अम्बेडकर इसे स्वीकार कर लेंगे।

***उपाध्यक्षः** एक संशोधन संख्या 3031 माननीय जी.एस. गुप्त का है।

(संशोधन पेश नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामतः** एक संशोधन श्री कामत का भी है।

***उपाध्यक्षः** यह तो पहले ही पेश हो चुका है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रांत तथा बरारः जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, इस खंड का संबंध आपात शक्तियों से है जबकि देश में गम्भीर आपात हो या राष्ट्रीय जोखम हो। अब, आपात क्या होता है? मेरे मित्र पंडित भार्गव ने कहा है कि आपात का कई प्रकार से निर्वचन किया जा सकता है। वे ठीक हैं। यह बहुत लचकीला शब्द है किन्तु इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि आपात आपात ही है। आक्सफोर्ड कोष के अनुसार आपात का अर्थ है एक अकस्मात घटना जिस पर तात्कालिक कार्यवाही आवश्यक हो। कोई इस बात से इंकार नहीं कर सकता कि सरकार को एक विशेष कार्यवाही करनी पड़ती है। क्या मैं जान सकता हूं कि क्या एक लोकतंत्रीय सरकार, एक जनता की सरकार ऐसी कार्यवाही करेगी जो जनता की इच्छाओं के विपरीत हो? क्या वे कोई ऐसी कार्यवाही कर सकते हैं जिससे साधारणतः यह कहा जा सके कि वे संविधान को निलम्बित करना चाहते हैं क्योंकि थोड़ा सा उपद्रव हो गया? वह सरकार एक दिन के लिये भी नहीं टिक सकती यदि वह लोकतंत्रात्मक सरकार हो। अतः वह आशंका एक क्षण के लिये भी नहीं टिक सकती।

मैं जानना चाहता हूं, आपात की स्थिति में जब कोई विपत्ति हो और देश की स्वाधीनता को खतरा हो, मैं अपने उन मित्रों से जो इस अनुच्छेद का विरोध करते हैं, यह जानना चाहता हूं, कि क्या वे यह चाहते हैं कि ऐसी स्थिति में हमारे

[श्री आर.के. सिधवा]

मंत्री लोग रेडियो या गाने सुनते रहें जबकि देश के किसी दूरस्थल कोने में ऐसी बातें हो रही हों जिनसे हमारी स्वतंत्रता को ही खतरा है, क्या वे नीरो के समान बन जायें जो रोम के जलने पर बंसी बजा रहा था? यदि इस अनुच्छेद का विरोध करने वालों का यह दृष्टिकोण हो तो मैं नहीं समझता कि वे वास्तव में इस अनुच्छेद का अर्थ समझते हैं। इस अनुच्छेद का प्रयोग तो तभी होगा जब राष्ट्रीय संकट हो और जब हमारी स्वतंत्रता को ही खतरा हो। मेरे मित्र श्री कामत ने कहा कि हमारी स्वाधीनता की रक्षा होनी चाहिये, और यह पूछा कि इन अधिकारों को क्यों छीना जा रहा है, क्या आप लोगों को फिर दास बनाना चाहते हैं? मैं कहता हूं कि हमारी स्वाधीनता की ही रक्षा के लिये, आपात में हमारी आजादी की ही रक्षा करने के लिये, मैं मंत्रियों को पर्याप्त शक्ति देना चाहता हूं कि वे देखें कि हमारी स्वाधीनता पर कोई संकट न आये और हम फिर गुलाम न बन जायें।

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे उस पर आपत्ति नहीं है, पर केवल आवश्यक रक्षण-कवच रख दीजिये।

***श्री आर.के. सिधवाः** मेरे मित्र ने विदेशी संविधानों से उद्धरण दिये हैं। कनाडा और आस्ट्रेलिया के संविधानों में ऐसा कोई उपबन्ध नहीं है। पर वहां एक परिपाटि है कि आपात के समय, केन्द्र प्रांतों से सब आवश्यक शक्तियां ले सकता है। परिपाटि द्वारा यह स्वीकार कर लिया गया है कि केन्द्र को आपात में ऐसा करने की अंतर्विष्ट शक्ति है। प्रत्येक सरकार को यह अंतर्विष्ट शक्ति होती है, यह अंतर्विष्ट अधिकार होता है कि वह स्वतंत्रता की रक्षार्थ कोई कार्यवाही कर सके। यदि हम इस प्रकार अपनी स्वतंत्रता की रक्षा नहीं करते तो मैं आपको विश्वास दिला देता हूं कि हमारी स्वतंत्रता संकट में पड़ जायेगी। मैं तो आगे बढ़कर यह भी कहूंगा। कि जैसी बातें हो रही हैं उन्हें देखते हुए तो मैं चाहता हूं कि हमारी सरकार को सब शक्तियां दे दी जायें जिससे कि हम यह देख सकें कि हमारी स्वतंत्रता खोई न जाये। क्या मेरे मित्र यह चाहते हैं कि हमारी स्वतंत्रता और हमारी सुरक्षा हमारे विरोधियों और हमारे शत्रुओं के हाथ में चली जाये?

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** क्या संसद आपकी शत्रु है?

***श्री आर.के. सिधवाः** नहीं, मैं अपने मित्र पंडित भार्गव से सर्वथा सहमत हूं। मैं उन्हें देश का शत्रु नहीं समझता। किन्तु बाहर ऐसे व्यक्ति है जो इस देश के शत्रु हैं, देश में भी और देश के बाहर भी हैं, शरारती लोग है जो शरारत पर तुले हुए हैं। मैं उनसे अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करना चाहता हूं, और उस प्रयोजन के लिये मैं अपनी स्वतंत्रता का भी थोड़ा सा अंश बलिदान करने के लिये तैयार हूं, जिससे कि देश की स्वतंत्रता बनी रहे। मैं नहीं चाहता कि कोई हमारी स्वतंत्रता को संकट में डाले जो कि हमने महान संघर्ष के पश्चात् प्राप्त की है।

श्रीमान, मैं अपने मित्र श्री कामत को बता सकता हूं कि अमरीका में भी, संयुक्त राज्य के संविधान में भी, इस आशय का एक उपबन्ध है।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या आपने उस संविधान को पढ़ा है?

***श्री आर.के. सिधवाः** मैंने पढ़ा है आप भी पढ़ सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** मैंने उसमें से उद्धरण दिया है।

***श्री आर.के. सिधवाः** हां, अमरीकी संविधान में, उसी आपात के सिद्धांत पर, अनुच्छेद 1, घारा 8, खंड 18, में इस शक्ति को मान्यता दी गई है।

***श्री एच.वी. कामतः** यह मूल लेख है या टिप्पणी?

***श्री आर.के. सिधवाः** मैंने श्री कामत को धारा बता दी है। अब वे यह तर्क नहीं कर सकते हैं कि...

***श्री एच.वी. कामतः** यह तो अशुद्ध उद्धरण है।

***उपाध्यक्षः** मुझे प्रसन्नता होगी यदि सदस्य माननीय सदस्य की वक्तृता में बाधा न डालें।

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान, मैं इस अनुच्छेद का प्रबल समर्थन करता हूं। किन्तु साथ ही, मैं अनुभव करता हूं कि मेरे कुछ मित्रों द्वारा उठाई गई कुछ आपत्तियां किसी हद तक उचित हैं, कि समूचे भाग 3 को निलम्बित नहीं करना चाहिये। भाग 3 में कुछ खंड है जिन्हें आपात में भी अछूता ही रहने दिया जा सकता है। उदाहरण के लिये, मूल अधिकारों में अनुच्छेद 11 का संबंध अस्पृश्यता से है। क्या में जान सकता हूं कि क्या आप आपात में अस्पृश्यता का पुनः प्रचलन करना चाहते है? उपाधि-संबंधी अनुच्छेद भी है। क्या आप चाहते हैं कि आपात में उपाधियां प्रदान की जायें? बेगार के संबंध में एक खंड है। क्या आप चाहते हैं कि आपात में बेगार ली जाये? अनुच्छेद 18 में लिखा है कि 14 वर्ष से कम का कोई बालक खानों में नियोजित न किया जाये। यदि आपात हो, तो क्या आप यह चाहते हैं कि 14 वर्ष का बालक खान में जाकर काम करे? फिर धर्म, शिक्षा आदि संबंधी अधिकारों के विषय में अनुच्छेद 19 है। जहां तक इन अधिकारों का संबंध है उस हद तक मैं अपने मित्रों की युक्तियों को समझ सकता हूं, और मैं यह युक्ति भी स्वीकार कर सकता हूं कि मसौदा-समिति को यह सुझाव नहीं रखना चाहिये था कि सूचना भाग 3 ही आपात में निलम्बित रहे। निस्संदेह बहुत से ऐसे अधिकार हैं, जैसे कि भाषण की स्वतंत्रता, स्वतंत्र सम्मेलन आदि, जो आपात में नहीं रह सकते। यह तो आपात के सिद्धांत के ही विरुद्ध है। किन्तु मैं यह अनुभव करता हूं कि मसौदा-समिति के लिये भाग 3 के पूर्ण निलम्बन का सुझाव रखना आवश्यक नहीं था, जहां अस्पृश्यता उपाधियों और ऐसी ही बातों की भी चर्चा है। आपात का यह अर्थ नहीं है कि सरकार दिन प्रतिदिन के कार्य को भी नहीं करेगी, किन्तु हमारी स्वतंत्रता को बनाये रखने के लिये, ऐसी विधियों, अधिकारों और विशेषधिकारों को निलम्बित किया जा सकता था और किया जाना चाहिये, जिससे देश के अस्तित्व पर ही प्रभाव पड़े। किन्तु विधि की असाधारण शक्तियों को निलम्बित किया जा सकता है। इन शब्दों के साथ, मैं इस अनुच्छेद का जोरदार समर्थन करता हूं। मैं जानता हूं कि इसका अर्थ यह होगा, कि व्यक्ति के वैयक्तिक अधिकार समाप्त हो जायेंगे, पर मुझे उसकी चिंता नहीं, क्योंकि मैं चाहता हूं और मैं यह देखने के लिये आतुर हूं कि हमारे देश की स्वतंत्रता को बनाये रखा जाये, और मुझे विश्वास है कि जिन मित्रों ने इस अनुच्छेद का विरोध किया है वे भी हमारी आजादी को बनाये रखने के लिये उतने ही आतुर हैं, यह तो केवल दृष्टिकोण में थोड़ा सा अन्तर है। कामत जैसे मेरे कुछ मित्र कह सकते हैं कि कोई अन्य

[श्री आर.के. सिधवा]

सरकार शक्ति आरूढ़ हो सकती है और आपात के आधार पर समस्त संविधान को उलट सकती है। पर लोकतंत्र में सरकार का परिवर्तन सदा सम्भव है। भावी सरकार और भी बुरे कानून बना सकती है, हम नहीं कह सकते कि वह किस प्रकार की सरकार होगी। किन्तु प्रारम्भिक काल में, जबकि हमने अपनी स्वतंत्रता को बहुत संघर्ष पश्चात् प्राप्त किया है और जब हम जानते हैं कि संकट विद्यमान है, तो हमें अपनी स्वतंत्रता को बनाये जाने के लिये थोड़ा सा अपना अधिकार छोड़ने के लिये तैयार रहना चाहिये—यद्यपि मैं कह सकता हूं कि मुझे अपने अधिकारों से उतना ही प्रेम है जितना किसी और को होगा। श्रीमान, इन शब्दों के साथ मैं इस अनुच्छेद का सबल समर्थन करता हूं।

***श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर** (मद्रास: जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद पर माननीय डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन का समर्थन करते हुए, मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। सबसे पहली बात यह है कि अनुच्छेद 280 के प्रथम भाग में, जैसा कि वह अब पेश किया गया है, समिति की वह बात पूरी हो जाती है जो कि पहले एक अवसर पर उसने पेश की थी, कि युद्ध के अस्तित्व मात्र से समस्त मूलाधिकार निलम्बित नहीं हो जायेंगे। अनुच्छेद में यह लिखा है, कि:—

> "जहां कि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में हो वहां राष्ट्रपति आदेश द्वारा घोषित कर सकेगा कि इस संविधान में भाग 3 द्वारा दिये गये अधिकारों में से ऐसों को प्रवर्तित कराने के लिये जैसे कि इस आदेश में वर्णित हों, किसी न्यायालय के प्रचालन का अधिकार तथा इस प्रकार वर्णित अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिये किसी न्यायालय में लम्बित सब कार्यवाहियां उस कालावधि के लिये जिसमें कि उद्घोषणा लागू करती है अथवा उससे छोटी ऐसी कालावधि के लिये, जैसी कि आदेश में उल्लिखित की जाये, निलम्बित रहेगी।"

यह मंशा नहीं है कि राष्ट्रपति मूलाधिकारों के अध्याय में उल्लिखित सब अधिकारों को निलम्बित कर देगा जिनका निर्देश मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा ने किया है। उनका यह कहना ठीक है कि ऐसे अधिकार भी हैं जिन्हें युद्ध के समय निलम्बित करना आवश्यक नहीं है। ऐसे अधिकार निलम्बित नहीं होंगे और नहीं हो सकते। पर खंड विशेषों का अलग-अलग उल्लेख करने की बजाय यह राष्ट्रपति पर छोड़ दिया गया है, और मुझे संदेह नहीं है कि राष्ट्रपति युक्ति-युक्त और समुचित तरीके से कार्यवाही कहेंगे, और संविधान में नागरिकों के लिये प्रत्याभूत मूल अधिकारों को समाप्त करने की ही भावना से काम नहीं करेंगे।

अनुच्छेद के दूसरे भाग में लिखा है:—

> "उपरोक्त प्रकार दिया हुआ आदेश भारत के समस्त राज्यक्षेत्र में अथवा उसके किसी भाग पर विस्तृत हो सकेगा।"

यह बात किसी सम्भव आपत्ति को हटाने के लिये रखी गई है कि गड़बड़, युद्ध या आंतरिक उपद्रव शायद समस्त भारत में विस्तृत न हों और किसी भाग विशेष तक ही सीमित हों, और इसलिये राज्य-क्षेत्र के प्रत्येक भाग में मूल अधिकार को निलम्बित करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

अंत में राष्ट्रपति या मंत्रिमंडल के लिये यह आवश्यक बना दिया गया है कि वह उस आदेश को यथासम्भव शीघ्र संसद के समक्ष पेश करे। संसद जो चाहे वह कार्यवाही कर सकती है, उसे कोई रोक नहीं सकता। राष्ट्रपति निलम्बित कर सकता है, पर फिर भी संसद कह सकती है कि इस अधिकार या उस अधिकार को निलम्बित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। बार-बार, सदन के समक्ष यह उल्लेख किया गया है कि राष्ट्रपति के नाम से काम करने वाला मंत्रिमंडल संसद के प्रति उत्तरदायी होगा। संसद को उस पर कोई भी कार्यवाही करने वाला मंत्रिमंडल संसद के प्रति उत्तरदायी होगा। संसद को उस पर कोई भी कार्यवाही करने का अधिकार है। इन परिस्थितियों में, इस अनुच्छेद पर सम्भवतः कोई आपत्ति नहीं की जा सकती।

इस संबंध में, मैं सदन को एक प्रसिद्ध लोकोक्ति का स्मरण कराऊंगा कि "मेगना कार्टा के सिद्धांतों पर कोई युद्ध नहीं लड़ा जा सकता"। कथन की स्वतंत्रता, सम्मेलन के अधिकार और अन्य अधिकारों को शांति-काल में सुरक्षित करना होता है किन्तु केवल उस समय जबकि राज्य का अस्तित्व रहे तथा राज्य की सुरक्षा प्रत्याभूत हो। अन्यथा ये सब अधिकार रह ही नहीं सकते। हम ऐसी स्थिति की कल्पना कर रहे हैं जबकि युद्ध हो, जहां करोड़ों व्यक्ति हैं, जिनकी निष्ठायं सम्भवतः विभाजित हों, यद्यपि वे सब भारत के ही नागरिक होंगे। हमें भरोसा है कि ऐसा समय आयेगा जबकि भारत के नागरिक दूरस्थ देशों की ओर नहीं देखेंगे पर हम भारत के सब नागरिकों के विषय में इस आधार पर अपनी धारणा नहीं बना सकते कि उनकी निष्टा पर विश्वास किया जा सकता है। वाक्-स्वतंत्रता का प्रयोग राज्य को संकट में डालने के लिये किया जा सकता है और उससे देश के सब साधनों को कुचला जा सकता है। यदि हम यह समझ जायें कि देश रहना चाहिये, राष्ट्र रहना चाहिये, राज्य रहना चाहिये यदि स्वतंत्रता और अन्य वस्तुओं की प्रत्याभूति होनी है, तो इस अनुच्छेद पर कोई सम्भावित आपत्ति नहीं हो सकती।

इस वाद-विवाद के मध्य अमरीकी संविधान का निर्देश दिया गया है। पता नहीं इस सदन के सदस्यों ने राष्ट्रपति की शक्तियों के विषय में प्रोफेसर कारविन की अर्वाचीन पुस्तक पढ़ी है या नहीं, वे सांविधानिक विधि के बहुत बड़े प्राधिकारी हैं। गृह युद्ध में राष्ट्रपति लिंकन ने बन्दी-प्रत्यक्षीकरण लेख को निलम्बित कर दिया था। अमरीकी संविधान में, बन्दीप्रत्यक्षीकरण को निलम्बित करने की शक्ति दी हुई है, पर यह नहीं लिखा कि निलम्बित करने का प्राधिकार संसद का है अथवा राष्ट्रपति का। किन्तु वास्तव में गृह युद्ध में राष्ट्रपति ने बन्दीप्रत्यक्षीकरण के लेख को निलम्बित कर दिया था और अमरीकी लोगों ने बुद्धिमानी करके राष्ट्रपति की शक्ति पर आपत्ति नहीं की।

राष्ट्रपति की शक्तियों के विषय में मैं एक और उद्धरण देना चाहता हूं। संयुक्त राज्य में राष्ट्रपति को जितनी तानाशाही शक्तियां हैं उतनी किसी अन्य देश में नहीं हैं। प्रोफेसर कारविन इसी बात को अपनी अर्वाचीन पुस्तक के पृष्ठ 317 पर इन शब्दों में लिखता है:—

"संयुक्त राज्य की युद्ध-शक्ति का तीन प्रकार से विकास हुआ है। सर्वप्रथम, इसका सांविधानिक आधार प्रदत्त शक्तियों के सिद्धान्त से हटकर अंतर्विष्ट शक्तियों

[श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर]

का सिद्धांत बन गया है, इस प्रकार यह प्रत्याभूति हो गई है कि राष्ट्र की पूर्ण वास्तविक शक्ति सांविधानिक रूप में उपलब्ध है। दूसरी बात यह है, प्रधान सेनापति के रूप में राष्ट्रपति की शक्ति सैनिक कमान की सामान्य शक्ति ही न रहकर आपात के समय की अनिश्चित शक्तियों का महान समूह बन गयी है जिसे महाधिवक्ता श्री विडल ने 'शक्तियों का समूह' बताया है। तीसरी बात यह है, कि प्रथम उल्लिखित विकास के परिणामस्वरूप युद्धकाल में कांग्रेस को जो अपार विधायिनी शक्तियां मिल जाती हैं, उन्हें आज कांगेस किसी हद तक भी राष्ट्रपति को दे सकती है, अर्थात, प्रधान सेनापति की अपार शक्तियों में किसी हद तक विलीन की जा सकती है।"

आज अमरीका में, जो सबसे अधिक लोकतंत्रात्मक देश है, यह स्थिति है। यहां हमारे यहां संसदीय प्रभुता का सिद्धात है। अत: मंत्रिमंडल को संसद के निकट सहयोग से कार्य करना होगा। जब वे संसद की इच्छाओं के विपरीत चलेंगे, तभी उनकी शक्ति का अन्त हो जायेगा। जहां तक संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति की शक्तियों का संबंध है, वे निरंकुश हैं। उससे उत्तर नहीं मांगा जा सकता। अत: मंत्रिमंडल की शक्तियों पर क्यों झगड़ते हो,—मैं मंत्रिमंडल शब्द का प्रयोग जान बूझकर कर रहा हूं क्योंकि कई बार स्मरण कराने पर भी सदन के सदस्य यह भूल जाते प्रतीत होते हैं कि संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद में 'राष्ट्रपति' शब्द का अर्थ समझना चाहिये—जनता के प्रति उत्तरदायी मंत्रिमंडल। लिंकन की जीवनी को पढ़कर जितना लाभ हो सकता है उतना किसी और चीज से नहीं।

अब मैं विविध आपत्तियों के विषय में कुछ कहूंगा जो इस वाद-विवाद के बीच में उठाई गई हैं। मेरे माननीय मित्र श्री भार्गव की बात का तो उत्तर मैं अपनी वक्तृता के पूर्व भाग में दे चुका हूं, कि संसद को इस मामले में अन्तिम शक्ति है। संसद राष्ट्रपति की किसी कार्यवाही को गलत कर सकती है। यदि वह चाहे तो मंत्रिमंडल को हटा सकती है क्योंकि मंत्रिमंडल युद्ध काल में भी, शांति काल के समान ही, लोक सभा के प्रति उत्तरदायी होता है।

उसका जीवन संसदीय बहुमत पर निर्भर होता है। मंत्रिमंडल और संसद में लगातार संबंध होता है, अत: हर बार संसदीय प्रभुता का यह आडम्बर खड़ा करना व्यर्थ है। संसद को अधिकार न देने का प्रश्न तो है ही नहीं। केवल यही प्रश्न है कि संसद कैसे शासन करेगी। शांति काल में वह प्रतिदिन कार्यपालिका के कार्य में हस्तक्षेप कर के राज्य कर सकती है, दूसरे समय वह राष्ट्रपति अर्थात मंत्रिमंडल को, जिसमें उसे विश्वास है, अपनी शक्ति न्यस्त करके शासन कर सकती है। अत: संसद के कार्य करने का तरीका काल और परिस्थितियों पर निर्भर होता है और उसकी शक्ति पर कोई विवाद नहीं करता।

फिर एक असाधारण सुझाव दिया गया है कि हमें एक क्षमा अधिनियम पारित करना चाहिये। क्षमा अधिनियम का क्या अर्थ है? जिन देशों में संसदीय प्रभुता है वहां क्षमा अधिनियम प्राय: युद्ध के पश्चात् पारित किया जाता है। सारे अधिनियमों

तथा अध्यादेशों के होते हुए भी यह सम्भव है कि कुछ अधिकारियों ने विधि की सीमा का उल्लंघन कर दिया हो। विधि के उल्लंघन से उनकी रक्षा करने के लिये तथा उन्हें मुआवजे के दावों या आपराधिक मुकदमों से बचाने के लिये ही प्राय: क्षमा के अधिनियम पारित किये जाते हैं। इस संबंध में मैं प्रोफेसर डायसी की 'संविधान की विधि' नामक पुस्तक का निर्देश करना चाहता हूं जिसमें उसने क्षमा अधिनियम के विस्तार तथा सिद्धांत को समझाया है। यदि प्रोफेसर शाह का यह अर्थ है कि युद्ध के समाप्त होने से पूर्व भी आप क्षमा अधिनियम पारित कर सकते हैं तो यह मूल अधिकारों के विलंबन से भी बुरी बात होगी, क्योंकि यह तो कार्यपालिका को खुली छुट्टी देना है। उसके द्वारा आप कार्यपालिका को यह प्रत्याभूति देते हैं कि उन्हें सारी विधि विपरीत कार्यवाहियों से बचा दिया जायेगा। निस्संदेह ऐसी बात प्रोफेसर शाह नहीं चाहते। अत: मेरा निवेदन है कि सदन के समक्ष जो प्रस्थापना पेश की गई है वह स्वीकार नहीं की जा सकती।

तीसरा एक विधि-संबंधी प्रश्न है जो पंडित ठाकुरदास भार्गव ने उठाया है, वह है अनुच्छेद 279 के संबंध में "जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब इस अधिनियम की किसी बात से राज्य की कोई विधि बनाने की अथवा कोई कार्यवाही करने की शक्ति निर्बन्धित नहीं होगी"। पर स्थिति यह है कि यदि आपात-उद्घोषणा की कालावधि में कोई विधि पारित होती है, तो वह आपात की समाप्ति पर स्वत: ही समाप्त हो जायेगी, अनुच्छेद 279 का यही अर्थ है। जो लोग राष्ट्रपति की शक्ति को सीमित करने के पक्ष में हैं वे इस उपबन्ध पर आपत्ति नहीं कर सकते, क्योंकि जहां कालावधि सीमित है, विधि स्वत: ही समाप्त हो जायेगी, जब तक कि संविधान में या उस अधिनियम विशेष में ऐसा कोई उपबन्ध न हो जिससे कि आपात की समाप्ति के पश्चात् भी वह जारी रह सके। अत: मेरे माननीय मित्र श्री ठाकुरदास भार्गव के संशोधन द्वारा तो उसकी और अनुच्छेद 279 के अधीन पारित नियम की अवधि बढ़ जायेगी और कम नहीं होगी।

अतएव, इन परिस्थितियों में, मेरा निवेदन है कि क्योंकि राज्य की सुरक्षा अधिक महत्वपूर्ण है, और क्योंकि व्यक्ति की स्वतंत्रता राज्य की सुरक्षा पर ही निर्भर रहती है और क्योंकि मेगना कार्टा के सिद्धांतों पर या वैयक्तिक स्वतंत्रता के सिद्धांतों पर युद्ध नहीं चलया जा सकता, विशेषत: ऐसे देश में जहां विविध प्रकार के लोग हैं, जिनकी निष्ठा भी भिन्न-भिन्न होना सम्भव है, अतएव यह उपबन्ध बहुत आवश्यक है। यह इस संविधान का प्राण होगा। लोकतंत्रात्मक संविधान का वध करना तो दूर रहा—जैसा कि एक वक्ता ने कहा है—यह लोकतंत्र को सदैव संकटों से और समाप्ति से बचायेगा।

इन शब्दों के साथ मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री कृष्णचन्द्र शर्मा** (संयुक्तप्रांत: जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैंने अपने माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर की वस्तृता को यथेष्ट ध्यान से सुना है। किन्तु मैं यह नहीं समझ सका, कि अनुच्छेद 13 में कुछ अधिकार दिये गये हैं। उसी अनुच्छेद में एक उपबन्ध है कि वह अधिकार निर्बन्धित किया जा सकता है। अनुच्छेद 15 में कुछ और अधिकार भी दिये गये हैं; उसी अनुच्छेद में एक उपबन्ध है कि उनको निर्बन्धित करने के लिये विधि बनाई जा सकती है। फिर अनुच्छेद 279 भी है जिसके अधीन अनुच्छेद 13 में दिये गये अधिकारों को आपात

[श्री कृष्णचन्द्र शर्मा]

घोषणा के अंतर्गत हटाया जा सकता है। अब मेरा विनयपूर्वक यह निवेदन है कि जब कोई अधिकार नहीं होते हैं तो कोई उपचार भी नहीं होता, और अनुच्छेद 280 की कोई आवश्यकता नहीं है, किन्तु जब अधिकार शेष होते हैं तो उसके लिये उपचार भी होता है। अत: मैं अनुच्छेद 280 के बनाने की कोई आवश्यकता नहीं समझता जिससे कि उन अधिकारों का भी उपचार छिन जाता है जो आपात विधान के अधीन कम या समाप्त नहीं किये गये हैं।

हमने आपात के विषय में बहुत कुछ सुना है श्रीमान, जब दो विश्व युद्ध लड़े गये हैं, तब कुछ मूल अधिकारों के लिये इस देश के उच्च न्यायालयों के पास जाने का अधिकार कभी नहीं छीना गया था, चाहे हम पर विदेशी शक्ति का शासन था, जो अपनी सुरक्षितता के लिये और सभ्यता की तथा संसार की सुरक्षितता के लिये लड़ रहे थे और हम अपनी स्वतंत्रता के लिये उस शक्ति के विरुद्ध लड़ रहे थे। मुझे ऐसी कोई आशंका नहीं है कि इस देश में कभी भी ऐसा आपात उत्पन्न होगा; और ऐसे अधिकारों को छीनने की कोई आवश्यकता नहीं है जिन्हें ब्रिटिश लोगों ने भी नहीं छीना था। आखिर, स्वाधीनता संसार में सबसे मधुर वस्तु है और आप उसे इतनी आसानी से नहीं छीन सकते। सब शासन का उद्देश्य जनता की समृद्धि और कल्याण होता है। हम पुलिस राज्य से थक गये हैं। यदि किसी सरकार या संविधान के अधीन आपात इतनी बार उत्पन्न हो जाता है, तो उस शासन या सरकार को समाप्त कर देना चाहिये। यदि राज्य शक्तिशाली है तथा जनता समृद्ध है तो ऐसा आपात उत्पन्न हो ही नहीं सकता। आप जनता के अधिकारों को कम करके शासन नहीं कर सकते; आप संविधान को तभी स्थिर रख सकते हैं, जब तक लोग समृद्ध हैं और विधि पालक हैं। पुलिस का आश्रय लेकर कोई राज्य नहीं टिक सकता। अत: मेरा निवेदन है कि इस प्रस्थापित अनुच्छेद 280 से कोई लाभ नहीं होगा और किसी संविधान में उसका कोई उदाहरण नहीं है। यदि कोई उदाहरण हों भी तो आपको काल और परिस्थितियों पर विचार करना होगा जिसमें ये संविधान बनाये गये हैं। इन उपबन्धों को अधिनियम करके आप उन लोगों को भी एक उपकरण दे रहे हैं जो गड़बड़ और अराजकता फैलाना चाहते हैं। श्रीमान, आप स्वाधीनता का दमन नहीं कर सकते, और न्यायालय के प्राधिकार को समाप्त नहीं कर सकते। मेरा निवेदन है कि इससे कोई उपयोगी अभिप्राय सिद्ध नहीं होगा और इसे पारित नहीं करना चाहिये।

***एक माननीय सदस्य:** अब प्रश्न पर मत लिये जाने चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न पर अब मत लिये जायें।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, इस बहस में भाग लेने वाले कुछ वक्ताओं ने मेरे पेश किये गये खंड के उपबन्धों के विरुद्ध जो प्रबल भावनायें प्रकट की उन पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अनुच्छेद में मूल अधिकारों का वर्णन है और लोगों के अधिकारों सम्बन्धी मामलों का उल्लेख है और इसलिये यह उचित

है कि हमें इस प्रकार के विषय पर जरा सावधानी से—वरन् मैं कह सकता हूं कि जरा आवेश से–विचार करना चाहिये। हम कुछ मूलाधिकारों को पारित कर चुके हैं और जब हम उन्हें कम करना या निलम्बित करना चाहते हैं तो हमें बहुत सावधान रहना चाहिये कि हम उन्हें कम करने या निलम्बित करने में क्या उपाय काम में लेते हैं।

अत: आशा है मेरे जो मित्र इस अनुच्छेद के विरुद्ध बोले हैं वे समझ जायेंगे कि मैं किसी प्रकार भी उनके कथन का विरोधी नहीं हूं। फिर भी मुझे यह कहते हुए खेद है कि मैं न उनके किसी संशोधन को और न उनके किसी सुझाव को ही स्वीकार कर सकता हूं। यदि मैं कह दूं तो मुझ पर उनकी किसी बात का प्रभाव नहीं पड़ा है। साथ ही मैं कह सकता हूं कि उन्हें मूल अधिकारों से जितना प्रेम है उतना ही मुझे भी है।

मैं अपने उत्तर में कुछ सामान्य प्रश्नों पर प्रकाश डालूंगा। हां, यह तो मेरे लिये सम्भव ही नहीं है, कि मैं उन सब विस्तार की बातों का उत्तर दूं जिन पर विविध वक्ताओं ने जोर डाला है। पहला प्रश्न यह है कि क्या आपात में मूल अधिकारों का निलम्बन होना चाहिये या निलम्बन होना ही नहीं चाहिये; दूसरे शब्दों में क्या हमारे मूलाधिकार अखंड होने चाहियें, जिन्हें कभी बदला नहीं जा सके, निलम्बित या निराकृत नहीं किया जा सके; या हमारे मूलाधिकार कुछ आपात के अधीन रहने चाहियें। मेरे विचार में मेरा यह कहना ठीक है कि सदन में अत्यधिक बहुमत आपात में इन अधिकारों को निलम्बित करने की आवश्यकता को समझता है; केवल यही प्रश्न है कि यह काम कैसे किया जाये।

अब यदि यह मान लिया जाये कि आपात में इन अधिकारों को निलम्बित करना आवश्यक है, तो अगला प्रश्न यह उठता है कि क्या इन मूलाधिकारों को निलम्बित करने का अधिकार पूर्णत: राष्ट्रपति को दे दिया जाये या उनका निर्णय करना संसद पर छोड़ देना चाहिये। पर अन्य देशों में जो कुछ किया जा रहा है उसे देखते हुए स्थिति यह है—और मुझे यह विश्वास है कि इस सदन में सब सहमत होंगे कि हमें अन्य देशों के संविधानों के उपबन्धों और अनुभव से लाभ उठाना चाहिये। जहां तक बन्दीप्रत्यक्षीकरण के अधिकार को निलम्बित करने का प्रश्न है, अंग्रेजी विधि के अधीन इस मामले का निर्णय विधि के अनुसार होना चाहिये। ग्रेट ब्रिटेन में यह स्थिति है। संयुक्त राज्य की स्थिति को लेते हैं तो हम देखते हैं कि कांग्रेस को सांविधानिक प्रत्याभूतियों के विषय में शक्तियां प्राप्त हैं जिनमें बन्दीप्रत्यक्षीकरण लेख का निलम्बन भी समाविष्ट है, राष्ट्रपति को ही इस मामले में कुछ करने की शक्ति नहीं है। मैं इस मामले के विस्तृत इतिहास को लेना नहीं चाहता। किन्तु मेरे विचार में यह कहना ही ठीक है, कि शक्ति तो कांग्रेस के हाथ में है, पर राष्ट्रपति को भी लेख के निलम्बन की अस्थायी रूप में शक्ति प्राप्त है। मेरे मित्र अपने सिर हिला रहे हैं। किन्तु मेरे विचार में यदि वे सुमान्य लेखक कारविन की पुस्तक 'दी प्रेसीडेंट' को पढ़ेंगे तो उन्हें पता लगेगा कि यही स्थिति है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** क्या आप मुझे उनके बीच में बोलने देंगे, श्रीमान? मुझे विश्वास है कि वे आगे की पुस्तक 'अमरीका का शासन' से परिचित हैं। शायद वे उसे सुमान्य पुस्तक समझेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** हां, वही एक पुस्तक नहीं है। अमरीकी संविधान पर सौ पुस्तकें हैं। उनमें से कोई 50 से तो मैं भी परिचित हूं।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** उसमें यह लिखा है कि सर्वोत्तम विधि-सम्बन्धी अभिप्राय यह है कि बन्दीप्रत्यक्षीकरण लेख के विशेषाधिकार को निलम्बित करने का अधिकार कांग्रेस में निहित है और राष्ट्रपति उसका प्रयोग तभी कर सकता है जबकि सशस्त्र बलों का प्रधान सेनापति होने के नाते वह सैनिक कार्यवाही की सुरक्षा के लिये उसे आवश्यक समझता हो।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** हां, मेरा निवेदन है कि संयुक्त राज्य में शक्ति तो कांग्रेस के हाथ में है, पर राष्ट्रपति को भी राज्य का कार्यपालिका-प्रधान होने के नाते, उसे निलम्बित करने का अस्थायी काल के लिये अधिकार है।

अब अपना संविधान बनाते समय हमने लगभग अमरीकी उदाहरण का अनुसरण किया है। अब मैंने जो संशोधन किया है उससे संसद को इस मामले में शक्ति मिल गई है। हम राष्ट्रपति को भी अस्थायी काल के लिये शक्ति देना चाहते हैं कि वह सांविधानकि प्रत्याभूति के विषय में यथावश्यक कार्यवाही कर सकता है।

अतः इस अनुच्छेद के मसौदे को और संयुक्त राज्य में की स्थिति की तुलना करें तो इन दोनों में कोई बड़ा अन्तर है ही नहीं। यहां भी राष्ट्रपति वैयक्तिक रूप में कोई कार्यवाही नहीं करता। हमारे यहां एक और रक्षण-कवच है जो अमरीकी संविधान में नहीं है, कि हमारा राष्ट्रपति कार्यपालिका की मंत्रणा पर चलेगा, और हमारी कार्यपालिका संसद के प्राधिकार के अधीन होगी। अतः जहां तक इस प्रत्याभूति को निलम्बित करने की सारी शक्ति देने का प्रश्न उठता है, मेरा निवेदन है कि हमारी प्रस्थापना बिल्कुल नई नहीं है जो किसी उदाहरण के बिना ही बना दी गई हो या मनमानें ढंग से बना दी गई हो और मूलाधिकारों की चिन्ता ही न की गई हो।

अब इस प्रश्न को निबटा कर मैं श्री भार्गव के संशोधन संख्या 74 को लेता हूं। मेरे विचार में वह एक महत्वपूर्ण मामला है और इसलिये मुझे यह बताना चाहिये कि कि उपबन्ध वास्तव में क्या है। उनका संशोधन वास्तव में अनुच्छेद 279 के सम्बन्ध में है। यद्यपि उन्होंने इसे अनुच्छेद 280 पर संशोधन के रूप में पेश किया है। वे यही चाहते हैं कि मूलाधिकारों को निलम्बित करने के आपात उपबन्धों द्वारा प्रदत्त प्राधिकार राज्य जो कार्यवाही करे वह उद्घोषणा की समाप्ति पर समाप्त हो जाये। मेरे विचार में जहां तक संशोधन संख्या 74 का सम्बन्ध है वे यही बात चाहते हैं। मेरा निवेदन है कि यदि अनुच्छेद को ठीक प्रकार पढ़ा जाये तो इसका यही तो अर्थ है। मैं उनका ध्यान अनुच्छेद 279 की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं। वे देखेंगे कि इस अनुच्छेद में आपात के समय दी गई शक्तियों के अधीन बनायी गई किसी विधि के अन्तर्गत की गई किसी कार्यवाही का अपवाद नहीं है। इस बात को स्पष्ट करने के लिये मैं उनका ध्यान अनुच्छेद 227 की ओर भी आकृष्ट करना चाहता हूं। यदि वे दोनों की तुलना करेंगे तो वे देखेंगे कि

दोनों अनुच्छेदों में एक मूल अन्तर है। अनुच्छेद 227 ऐसा अनुच्छेद है जिससे केन्द्र को शक्ति मिलेगी कि वह आपात में कुछ ऐसी विधियां भी बना सकते हैं जिनका प्रभाव राज्य सूची पर भी पड़ सकता है। मैं उनका ध्यान अनुच्छेद 227 के खण्ड (2) की ओर दिलाना चाहता हूं। वे देखेंगे कि उसके अन्त में लिखा है: "वे सब कार्यवाहियां, उद्घोषणा के प्रवर्तन की समाप्ति के पश्चात् 6 मास की कालावधि की समाप्ति पर उन सब बातों के अतिरिक्त प्रवर्तनहीन होंगी जो उस कालावधि की समाप्ति से पूर्व की गई या की जाने से छोड़ दी गई है।"। यह खण्ड अनुच्छेद 279 में नहीं है। अत: अनुच्छेद 279 के उपबन्धों के अधीन बनाई गई विधियां ही नहीं समाप्त हो जायेंगी वरन् कोई कार्यवाही, जो कर दी गई हो, वह भी समाप्त हो जायेगी। अत: जो व्यक्ति अनुच्छेद 279 के अधीन बनाई गई किसी विधि के उपबन्धों के अधीन पकड़ा गया हो वह भी उस विधि द्वारा शासित नहीं होगा जो प्रवर्तनहीन हो गई है, केवल इसलिये कि वह विधि उस अनुच्छेद के अन्तर्गत बनाई गई थी। इस अनुच्छेद 279 के अधीन केवल विधि की समाप्त नहीं हो जोयगी, वरन् जो कार्यवाही की जा चुकी है वह भी समाप्त हो जायेगी।

फिर मैं अनुच्छेद 8 के खण्ड (2) की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। वह भी एक महत्वपूर्ण अनुच्छेद है जो अनुच्छेद 279 के साथ पढ़ा जाना चाहिये। अनुच्छेद 8 इस संविधान के सामान्य उपबन्धों का अपवाद है कि विद्यमान विधि प्रवर्तन में रहेगी। अनुच्छेद 8 में लिखा है कि मूलाधिकारों से असंगत कोई प्रवृत्त विधि शून्य हो जायेगी। अनुच्छेद 8 खण्ड (1) विद्यमान विधि के सम्बन्ध में है तथा खण्ड (2) भावी विधियों के सम्बन्ध में है। अत: 'अनुच्छेद 279 के अधीन बनाई गई कोई विधि, भावी होगी। जब आपात समाप्त हो जायेगा तो अनुच्छेद 279 के अधीन बनाई गई विधि अनुच्छेद 8 के खण्ड (2) के अधीन आ जायेगी, जिससे कि यदि वह मूल अधिकारों से असंगत होगी तो वह स्वत: ही समाप्त हो जायेगी।

इसलिये मेरा निवेदन है कि जहां तक संशोधन 74 का सम्बन्ध है, इस विषय में अभिव्यक्त आशंकायें निराधार हैं। विद्यमान विधि में पर्याप्त उपबन्ध है जिसमें वे सब मामले आ जाते हैं जो मेरे माननीय मित्र पण्डित ठाकुरदास भार्गव के दिमाग में हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** अनुच्छेद 227 (2) में संसद द्वारा निर्मित विधि का निर्देश है। इसमें कार्यपालिका द्वारा की गई किसी कार्यवाही का निर्देश नहीं है। दूसरी बात, इसमें संसद द्वारा निर्मित विधि की चर्चा है, जबकि अनुच्छेद 13 में ऐसी विधि का निर्देश है जो उसमें परिभाषित किसी राज्य द्वारा निर्मित हो।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वहां राज्य का अर्थ दोनों हैं क्योंकि अनुच्छेद 279 में प्रयुक्त 'राज्य' शब्द उसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है जिसमें कि वह भाग 3 में प्रयुक्त हुआ है जहां उसका अर्थ है केन्द्र, प्रान्त तथा नगर पालिकायें आदि।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** पर 227 (1) में केवल संसद का ही निदेश है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं भी तो यही कहता हूं। 279 भी 8 के अधीन रहेगी। अत: मूल अधिकारों से असंगत कोई विधि प्रवर्तन में नहीं रहेगी।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

अब मैं पंडित भार्गव के संशोधन संख्या 78 को लेता हूं। उस संशोधन में उन्होंने कहा है कि इन मूल अधिकारों के उपबन्धों को निलम्बित करने वाले राष्ट्रपति द्वारा निकाले गये आदेश का अनुसमर्थन स्पष्ट रूप से होना चाहिये। वे कहते हैं कि राष्ट्रपति द्वारा निकाले गये आदेश का संसद स्पष्ट अनुसमर्थन करे। मस्विदा समिति द्वारा प्रस्थापित अनुच्छेद में लिखा है कि अनुसमर्थन को वैसे ही समझ जाये जब तक कि संसद स्पष्टतः राष्ट्रपति के आदेश का निराकरण न कर दे। इस संशोधन में और मेरे अनुच्छेद में यही असली अन्तर है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** किन्तु यह बहुत मूल अन्तर है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह बहुत मूल बात है। एक प्रकार से यह बात मूलभूत है और एक प्रकार से यह मूल नहीं भी है क्योंकि हमने यह बात रखी है कि उद्घोषणा संसद के समक्ष रखी जायेगी। वह बात मैंने अब आवश्यक बना दी है। स्पष्टतः यदि संसद को बुलाया जायेगा और उसके समक्ष उद्घोषणा रखी जायेगी, तो यह मूर्खता की बात होगी। यदि संसद में आने वाले लोग स्पष्ट कार्यवाही नहीं करते और ऐसी संसद अनावश्यक वस्तु होगी और उसकी आवश्यकता नहीं है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** क्या यह कहना आवश्यक नहीं है कि विधि आपात की कालावधि के लिये ही लागू होगी और कम समय के लिये नहीं तथा उद्घोषणा के पश्चात् 6 मास के लिये भी नहीं होगी?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं उस पर आ रहा हूं, किन्तु जहां तक इस प्रश्न का सम्बन्ध है, यह तो केवल विस्तार की ही बात है कि क्या संसद स्पष्टतः प्रस्ताव द्वारा यह कहे कि हम चाहते हैं कि राष्ट्रपति इसे वापस ले, या राष्ट्रपति इसे जारी रखे या राष्ट्रपति रूपभेद के साथ इसे जारी रखे। एक बार संसद को बुलाकर उसे मामला सौंप किया जाये तब क्या यह उचित नहीं है कि संसद पर यह मामला छोड़ दिया जाये तथा यदि वह अन्यथा विनिश्चय न करे तो संसद की अनुमति समझ ली जाये? इसमें क्या कठिनाई है? संशोधन के सम्बन्ध मैं मुझे कोई बात दिखाई नहीं देती।

***एक माननीय सदस्यः** अब एक बज गया है।

***उपाध्यक्षः** हम इस अनुच्छेद को समाप्त कर देते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्री गुप्ते ने एक संशोधन पेश किया है जो पंडित भार्गव के संशोधन संख्या 78 पर संशोधन है। वे चाहते हैं कि सुनिश्चित कालावधि का उल्लेख है कि उद्घोषणा दो मास में ही संसद के समक्ष रखी जानी चाहिये। पंडित भार्गव के संशोधन में एक मास है, और मेरी मूल प्रस्थापना में 'यथासम्भव शीघ्र' था। खैर, मैं नहीं जानता कि क्या कोई इसे अपनी आत्मा सम्बन्धी मामला समझ लेगा और यदि इसकी प्रत्याभूति न दी गई तो हम आमरण अनशन करने लगेंगे। मेरे विचार में 'यथासम्भव शीघ्र' का ऐसा अर्थ लगाया जा सकता है

कि मामले को संसद के समक्ष एक मास में ही रख दिया जाये, दो मास में ही या एक पखवारे में ही रख दिया जाये। यह बहुत लचकीली पदावलि है और इसलिये मेरा निवेदन है कि मसौदे में समाविष्ट उपबन्ध इन परिस्थितियों में सर्वोत्तम है और मुझे आशा है कि सदन इसे स्वीकार कर लेगा।

***उपाध्यक्षः** अब मैं संशोधनों को सदन के समक्ष रखता हूं।

संशोधन संख्या 3028–ग्रन्थ 2 मुद्रित सूची।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं उसे वापस लेता हूं, श्रीमान।

(संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।)

***उपाध्यक्षः** संशोधन संख्या 3030।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं उस संशोधन को वापस लेता हूं।

(संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।)

***उपाध्यक्षः** अब मैं सदन के समक्ष पण्डित कुंजरू का संशोधन संख्या 211 रखता हूं जो मुद्रित एकत्रित सूची में है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** मैं उस संशोधन को वापस लेता हूं।

(संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।)

***उपाध्यक्षः** मैं सदन के समक्ष सूची संख्या 1 के संशोधनों को पेश करता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 14 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280 के खण्ड (1) में, 'भाग 3' इस शब्द तथा अंक के स्थान पर 'अनुच्छेद 13 तथा 16' ये शब्द तथा अंक रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्षः** प्रश्न यह है:

(1) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (1) में, 'the President may by order declare' इन शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law provide' ये शब्द रख दिये जायें।

(2) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (1) में, 'mentioned in the order' इन शब्दों के स्थान पर 'specified in the Act' ये शब्द रख दिये जायें।

[उपाध्यक्ष]

(3) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (1) में, 'the rights so mentioned' इन शब्दों के स्थान पर 'any of such rights to mentioned' ये शब्द रख दिये जायें।

(4) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (1) में, 'in the order' इन शब्दों के स्थान पर खण्ड के अन्त में, 'in the Act' ये शब्द रख दिये जायें।

(5) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (2) और (3) के स्थान में निम्न खण्ड रख दिया जाये:—

'(2) An Act made under clause (1) of this article may be renewed, repealed or varied by a subsequent Act of Parliament.'

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:—

"(1) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 में, 'mentioned' शब्द के स्थान पर, जहां वह प्रथम बार प्रयुक्त हुआ है, 'specified' यह शब्द रख दिया जाये।

(2) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 में, 'the rights so mentioned' इन शब्दों के स्थान पर, 'any of such rights so mentioned' ये शब्द रख दिये जायें।

(3) कि उपरोक्त संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (3) के स्थान पर, निम्नलिखित रख दिया जाये:—

'An order made under clause (1) of this article, shall, before the expiration of fifteen days after it has been made, be laid before each House of Parliament, and shall cease to operate at the expiration of seven days from the time when it is so laid, unless it has been approved earlier by resolutions of both Houses of Parliament.'

(4) कि उपरोक्त संशोधन संख्या में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (3) के पश्चात्, निम्न नये खण्ड जोड़ दिये जायें:

(4) An order made under clause (1) of this article may be revoked by a subsequent order.

(5) 'An order made under clause (1) of this article may be renewed on varied by a subsequent order, subject to the provisions of clause (3) of this article.'

(5) कि संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के अन्त में निम्न नया खण्ड जोड़ दिया जाये:—

'Notwithstanding anything contained in this article, the right to move the Supreme Court or a High Court by appropriate proceedings for a writ of *habeas corpus,* and all such proceedings pending in any court shall not be suspended except by an Act of Parliament.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 19 गिर जाता है क्योंकि वह संशोधन संख्या 18 पर आधारित है।

संशोधन संख्या 23, 24, 25 और 26 सब गिर जाते हैं क्योंकि संशोधन संख्या 3025 को वापस ले लिया गया।

फिर मैं सूची संख्या 2 को लेता हूं।

प्रश्न यह है:—

"कि संशोधनों पर संशोधनों की प्रथम सूची (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 के निर्देश से, अनुच्छेद 179 के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद जोड़ दिया जाये:

'279. A. Any law made or any executive action taken under article 279 in derogation of the provisions of article 13 of Part III of the Constitution shall ensure for such period only as is considered necessary by the State as defined in that Part and in no case for period longer than the peiod during which a Proclamation of Emergency is in force.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:

'280. Any law made or executive action taken under article 279 shall ensure for such period only as is considered

[उपाध्यक्ष]

necessary by the State as defined in Part III of the Constitution and in no case for a period longer than the period during which a Proclamation of Emergency remains in force.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (1) में 'a Proclamation of Emergency' इन शब्दों के पश्चात् 'under article 275 (1) of the Constitution' ये शब्द, अंक तथा कोष्ठक प्रविष्ट कर दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (2) में, अन्त में, निम्न जोड़ दिये जायें:

'for a period during which the Proclamation is in force or for such shorter period as may be specified.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (2) के पश्चात् निम्न नया खण्ड जोड़ दिया जाये:

'(2-A) Any such order may be revoked or varied by a subsequent order.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (2) में, अन्त में, निम्न जोड़ दिया जाये:

'and shall cease to operate at the expiration of one month unless before the expiration of that period it has been

approved by resolution of both Houses of Parliament:

Provided that if any such order is issued at a time when the House of the People has been dissolved or if the dissolution of the House of the People takes place during the period of one month referred to in clause (3) of this article and the order has not been approved by a resolution passed by the House of the People before the expiration of that period, this order shall cease to operate at the expiration of fifteen days from the date on which the House of the People first sits after its reconstitution unless before the expiration of that period resolutions approving the order have been passed by both Houses of Parliament.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (प्रथम सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (3) में, अन्त के पूर्ण विराम के स्थान पर अर्ध-विराम रख दिया जाये और तत्पश्चात् 'when it meets for the first time, after such an order' ये शब्द जोड़ दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 86 का प्रश्न नहीं उठता।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 15 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 280 के खण्ड (3) के अन्त में, निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:—

'and if the House of the People, by a resolution passed by it, amends, varies or rescinds the order, the resolution shall be given effect to immediately.' "

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 280 के स्थान पर, निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:

Suspension of the rights guaranteed by article 25 of the Constitution during emergencies.

280. (1) Where a Proclamation of Emergency is in operation, the President may by order declare that the right to move any court for the enforcement of such of the rights conferred by Part III of this Constitution as may be mentioned in the order and all proceedings pending in any court for the enforcement of the rights so mentioned shall remain suspended for the period during which the Proclamation is in force or for such shorter period as may be specified in the Order.

(2) An order made as aforesaid may extend to the whole or any part of the territory of India.

"(3) Every order made under clause (1) of this article shall as soon as may be after it is made be laid before each House of Parliament."

आपात में संविधान के अनुच्छेद 25 द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों का निलम्बन

[280. (1) जहां आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है वहां राष्ट्रपति आदेश द्वारा घोषित कर सकेगा कि इस संविधान में भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से ऐसों को प्रवर्तित कराने के लिये जैसे कि इस आदेश में वर्णित हों, किसी न्यायालय के प्रचालन का अधिकार तथा इस प्रकार वर्णित अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिये किसी न्यायालय में लम्बित सब कार्यवाहियां उस कालावधि के लिये जिसमें कि उद्घोषणा लागू रहती है अथवा उससे छोटी ऐसी कालावधि के लिये, जैसी कि आदेश में उल्लिखित की जाये, निलम्बित रहेगी।

(2) उपरोक्त प्रकार दिया हुआ आदेश, भारत के समस्त राज्य-क्षेत्र में अथवा उसके किसी भाग पर विस्तृत हो सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद के खण्ड (1) के अधीन दिया प्रत्येक आदेश उसके दिये जाने के पश्चात् यथा सम्भव शीघ्र संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जायेगा।]

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***उपाध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 280, संविधान का अंग बने।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 280 संविधान में जोड़ दिया गया।

***श्री एच.वी. कामतः** यह एक दु:ख तथा शर्म का दिन है। भगवान भारतीयों की सहायता करे।

***उपाध्यक्षः** अब सदन सोमवार को प्रात:काल 9 बजे तक के लिये स्थगित रहेगा।

तत्पश्चात् सभा सोमवार, 22 अगस्त 1949 के 9 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।